चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र
50
8

Photo by S. R. Shinde

पुरस्कृत
पारितोषिक

"कहाँ जा रहे हो?"

प्रेषक :
श्री रमेश कंवरी, नयी दिल्ली

अतिशय नवीन
और सुवासिक...
रेमि
टायिलेट
पाउडर

चन्दामामा

अगस्त १९५८

विषय-सूची

अल्विटोन

भारत का अपना लोकप्रिय पौष्टिक पेय।

निर्माता :

अल्विटोन लेबोरेटोरीज़, मद्रास-१६.

सम्पूर्ण उत्तर भारत के लिए वितरक :

स्पेन्सर एन्ड कं., लिमिटेड, बम्बई – दिल्ली – कलकत्ता.

बच्चों के लिये

एक और सरल

गिब्स डेन्टिफ़्रिस चित्रकारी प्रतियोगिता-

अद्भुत इनाम!

पहला इनाम :
रैले बाइसिकल

दूसरा इनाम :
एच. एम. वी. ग्रामोफ़ोन

तीसरा इनाम :
व्यू मास्टर प्रोजेक्टर सेट

और १०० आकर्षक इनाम—प्रोत्साहन के लिये!

इस चित्र में रंग भरिए : यह बहुत ही आसान है और आपको मज़ा भी आयेगा! और आप एक अद्भुत इनाम भी जीत सकते हैं—कोई ऐसी चीज़ जो चिरकाल से आपको पाने की कामना रही है। वाटर कलर, रंगदार चाक, रंगदार पैन्सिलें या जो भी रंग आपके पास हों आप इस्तेमाल कर सकते हैं। इसे जितना सुंदर बना सकते हों, बनाइये और फिर गिब्स डेन्टिफ़्रिस की डिबिया पर लपेटे हुए सेलोफ़ेन कागज़ पर से गिब्स की मुहर उतार कर, इस चित्र के साथ हमें भेज दीजिये। अपनी माता से कहिये कि वे आज ही आपको गिब्स डेन्टिफ़्रिस की एक डिबिया खरीद दें। इसे रोज़ इस्तेमाल कीजिये!

तीन व्यक्तियों की एक कमेटी, कौन से चित्र सब से ज़्यादा अच्छे हैं, इसका फ़ैसला उनके गुणों के अनुसार करेगी। आज ही अपना दाखिला भेजिये!

इन नियमों को ध्यान में रखिये : १. भारत में रहने वाले, १४ वर्ष तक की आयु के सभी लड़के लड़कियाँ, इस प्रतियोगिता में भाग ले सकते हैं। २. आप जितने दाखिले चाहें भेज सकते हैं, मगर हर दाखिले के साथ गिब्स डेन्टिफ़्रिस की डिबिया पर लपेटे हुये सेलोफ़ेन कागज़ पर लगी हुई गिब्स की मुहर ज़रूर होनी चाहिये। ३. दाखिले शनिवार ३० अगस्त १९५८ की दोपहर के एक बजे तक इस पते पर पहुँच जाने चाहियें: पोस्ट बाक्स नं. १०११९ बम्बई १। ४. दाखिलों के खो जाने, समय पर न पहुँचने, इधर उधर या खराब हो जाने की ज़िम्मेदार कम्पनी नहीं होगी। ५. पहला, दूसरा और तीसरा इनाम जीतने वालों के नाम इस पत्रिका के नवम्बर के अंक में प्रकाशित किये जायेंगे। अन्य इनाम जीतनेवालों को डाक द्वारा सूचना दी जायेगी।

GD. 40A-30 III

वीर मुन्नू और गप्पी चुन्नू

कहते हैं उस खंडहर में भूत रहते हैं!
भूतों से डरती है मेरी जूती!

विश्वास नहीं तो आज रात देख लो। मुझे देखते ही भूत हवा हो जायेंगे!

वही रात
अच्छा चुन्नू, जो डर कर भागे, वह डरपोक!
बिलकुल! मेरे तो, यहाँ से सुबह तक कदम डगमगाने के नहीं!

DL. 337A-50 MI

अरे गुडू! डरता क्या है? हम हैं तो क्या ग़म है! —अरे? वह क्या है?

बाप रे बाप! यह तो हमारी तरफ़ ही आ रहा है—बचाओ! बचाओ!

रुक जा गुडू, रुक जा! यह तो शेर की मौसी बिल्ली है!

श श श शेर? ओ--बिल्ली! म म मैं डरा नहीं था-- खड़े खड़े ज़रा थक गया था!
अच्छा जी?...ख़ैर जो भी कुछ है, तुझ में हिम्मत और ताक़त तभी आयेगी, जब तू भी मेरी तरह हर रोज़ ज़्यादा दूध पियेगा और 'डालडा' से बना खाना खायेगा।
जी हाँ, 'डालडा' से बना खाना ताक़त देता है। इस में स्वास्थ्यदायक विटामिन 'ए' और 'डी' मिलाये जाते हैं, जो बच्चों के दाँतों और हड्डियों को मज़बूत करते हैं। हमेशा 'डालडा' खरीदिये, जिस के डिब्बे पर खजूर के पेड़ का निशान बना होता है।

सप्ताह के अंत में सैर-सपाटा,
दोस्तों के बीच हँसी-खुशी,
ताज़गी देनेवाली चाय का प्याला,
हटाती चिंता की फाँसी !
मैं चाय हूँ–
मैं आपकी दोस्त
और आपके दोस्त की दोस्त हूँ
TEA BOARD INDIA
PST 209

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

शिक्षा के विस्तार के लिए भारतीय सरकार विशेष रूप से प्रयत्नशील मालूम होती है। कहा जा रहा है कि निकट भविष्य में हज़ारों अध्यापकों की नियुक्ति होगी।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में पुस्तकों पर अधिक जोर दिया जाता है। अतः विद्यार्थियों की स्वाभाविक प्रतिभा कदाचित् उतनी विकसित नहीं हो पाती जितनी की हो सकती है।

शिक्षा का विस्तार पर्याप्त नहीं है। शिक्षा प्रणाली में आवश्यक परिवर्तन करने होंगे। स्वतन्त्र भारत के भावी नागरिकों के उपयुक्त यह प्रणाली होनी चाहिए।

शिक्षा का निर्माणात्मक होना आवश्यक है। इस प्रकार की शिक्षा में मौलिक प्रतिभा को विकसित होने का अवकाश मिलता है—और शिक्षा की परिधि भी अधिक विस्तृत होती है।

विद्यार्थियों में यह भावना आ जाती है कि शिक्षा का उद्देश्य केवल डिग्रियाँ बटोरना नहीं है, परन्तु आत्म विकास है।

वर्ष : ९ अगस्त १९५८ अंक : १२

मुख - चित्र

युद्ध में सहायता देने के लिए युधिष्ठिर का निमन्त्रण पानेवालों में नकुल और सहदेव के मामा मद्र देश का राजा शल्य था। वह अपनी एक अक्षौहणी सेना, अपने लड़के, सेनापति आदि के साथ युधिष्ठिर से मिलने आ रहा था। यह खबर दुर्योधन को मिली। उसको अपनी तरफ मिलाने के लिए दुर्योधन ने एक चाल सोची।

उसने स्वयं शल्य के लिए और उसके परिवार के लिए रास्ते में हर पड़ाव पर हर तरह की सुविधाओं का प्रबन्ध करवाया। यह जानकर कि वह सब प्रबन्ध युधिष्ठिर करवा रहा था, शल्य ने अपने एक आदमी से कहा—"हमारे लिए कौन ये प्रबन्ध कर रहे हैं? उनको मुँह माँगा ईनाम दूँगा।"

यह जानते ही दुर्योधन, शल्य के सामने आया। प्रेम से उसका आलिंगन कर उसने कहा—"आपको हमारी सेना का सेनापति बनना होगा। यह मेरी इच्छा है।" मैं वचन देकर नहीं मुकरता हूँ। तुम्हारी इच्छानुसार तुम्हारी सेना का नेतृत्व करूँगा। परन्तु मुझे एक बार पाण्डवों को देखकर आने दो।" शल्य ने कहा। दुर्योधन इसके लिए मान गया और हस्तिनापुर चला गया।

शल्य ने जाकर पाण्डवों को देखा। युधिष्ठिर ने उसका बहुत ही आदर-सत्कार किया। शल्य ने युधिष्ठिर से कहा—"जुवे में हार कर तुमने बहुत-सी मुसीबतें झेली हैं। न्याय होकर रहेगा। आगामी युद्ध में विजय तुम्हारी ही है।"—कहकर, उसने विस्तार पूर्वक बताया कि उसने दुर्योधन को कैसे वचन दिया था।

"बड़ों का वचन निभाना धर्म है। परन्तु मुझे क्षमा करके आप मेरी एक इच्छा पूरी कीजिये। युद्ध में कृष्ण और अर्जुन भाग लेंगे। अर्जुन का सारथी कृष्ण है। कौरव सेना में आपसे बढ़कर कोई सारथी नहीं है। इसलिए आपको कर्ण का सारथी बनना होगा। तब जैसे भी हो अर्जुन की विजय के लिए सहायता कीजिये।" शल्य ने सहायता करने का वचन दिया।

सन्देह निवारण

विन्ध्या पर्वत के प्रदेश में शम्भू नाम का एक गरीब नवयुवक रहा करता था। वह पहाड़ों में जैसे तैसे खेती करके अपनी बूढ़ी माँ का पालन पोषण किया करता था। उसे एक दिन सन्देह हुआ—उसकी उम्र में उसकी ही तरह कष्ट उठाकर यदि लोग धनी होते हैं तो वह वर्ष भर मेहनत करने पर भी क्यों नहीं अपनी और अपनी माँ का पेट भर पाता था?

उस इलाके में लोग अक्सर यह कहते सुने जाते थे। "यदि सन्देह हो तो अंगीरस महामुनि से पूछो।" यह कहा जाता था कि वह महामुनि नासिक के पास पहाड़ों में तपस्या किया करता था।

शम्भू ने अपने सन्देह के बारे में अंगीरस महामुनि से पूछने का निश्चय किया। यह निश्चय करते ही उसने अपनी माँ से कहा—"माँ, मैं नासिक जा रहा हूँ।" माँ ने बहुत मना किया पर वह बिना माने नासिक के लिए निकल पड़ा।

जाते जाते उसे एक निर्जन प्रान्त में एक झोंपड़ी दिखाई दी। उसे भूख सता रही थी, इसलिए उसने झोंपड़े के पास जाकर उसमें रहनेवाली बुढ़िया से पूछा—"क्यों नानी थोड़ा खाने को दे सकोगी? दूर से चला आ रहा हूँ।" बुढ़िया ने उसे भोजन परोसकर पूछा—"क्यों, बेटा, कहाँ जा रहे हो? किस काम पर जा रहे हो?"

"मैं अंगीरस महामुनि से यह मालूम करने जा रहा हूँ कि इतनी मेहनत करने पर भी क्यों नहीं मेरी गरीबी दूर होती है?" शम्भू ने कहा।

"तो, बेटा, उनसे एक और बात भी पूछना। मेरी पोती अट्ठारह वर्ष

भीमसेन

की है। बड़ी सुन्दर है। परन्तु कभी बात नहीं करती। उसकी मूकता कैसे हटेगी जरा यह भी पूछते आना।" बुढ़िया ने कहा।

शम्भू इसके लिए मान गया और वहाँ से चल दिया। जाते जाते उसे एक शहर के बाहर एक घर दिखाई दिया। उसने वहाँ खड़े होकर घर के मालिक से कहा—"जी, बहुत दूर से चला आ रहा हूँ। भूख है। क्या थोड़ा खिला सकोगे?

घर के मालिक ने शम्भू को अपने साथ भोजन परोसवाया। फिर उसने पूछा—"क्यों बेटा, कहाँ जा रहे हो? किस काम पर जा रहे हो?

"मैं अंगीरस महामुनि से यह पूछने जा रहा हूँ कि मेरे भरसक मेहनत करने पर भी मेरी गरीबी क्यों नहीं हटती?" शम्भू ने कहा।

"अच्छा, यह बात है तो एक हमारी बात भी पूछते आना। हमारे आँगन में एक बढ़िया नारंगी का पेड़ है। सालों हो गये पर उस पर फूल तक नहीं लगता है। अंगीरस महामुनि से पूछकर क्या इसका कारण जान सकोगे?" उस घर के मालिक ने पूछा।

शम्भू इसके लिए भी मान गया और वहाँ से चल पड़ा। जाते जाते एक घने जंगल में उसे एक आश्रम दिखाई दिया। उस आश्रम के मुनि के पास जाकर शम्भू ने पूछा—"स्वामी, भूख लग रही है। कुछ खाने को क्या दे सकेंगे?"

मुनि ने उससे पूछा—"तुम कहाँ जा रहे हो? किस काम पर जा रहे हो?"

"मैं अंगीरस महामुनि से यह पूछने जा रहा हूँ कि मेरे मेहनत करने पर भी मेरी गरीबी क्यों नहीं हटती है?" शम्भू ने कहा।

"—तो उनसे जरा मेरा एक सन्देह भी पूछते आना। मैं बहुत समय से कुछ सिद्धियों के लिए तपस्या करता आया हूँ। पर मेरी तपस्या सफल होती नजर नहीं आती। क्या इसका कारण उनसे जान सकोगे?" मुनि ने कहा।

शम्भू मान गया। वह वहाँ से चलकर बहुत दिनों की यात्रा के बाद अंगीरस महामुनि के स्थान पर पहुँच सका। महामुनि उसको गौरवपूर्वक अपने आश्रम में ले गया।

"महात्मा, मैं चार सन्देहों के बारे में आपसे पूछने आया हूँ।" शम्भू ने कहा।

"मेरा, एक समय में तीन सन्देहों का निवारण करने का ही नियम है। तुम अपने सन्देहों में से एक को हटादो, बाकी पूछो।" अंगीरस महामुनि ने कहा।

शम्भू ने कुछ देर सोचकर निर्णय किया कि सब सन्देहों में उसका अपना सन्देह ही सब से कम महत्वपूर्ण था। फिर उसने गूँगी लड़की, बिना फसल के नारंगी के पेड़ और असफल तपस्या वाले मुनि के बारे में पूछा। महामुनि ने उसके सन्देहों का निवारण भी किया। वापिसी रास्ते में वह पहिले पहल मुनि के आश्रम में पहुँचा। मुनि ने उत्कंठापूर्वक पूछा—"बेटा! अंगीरस मुनि ने क्या बताया?"

"आपके सिर में कोई मणि है। आपकी तपस्या का सारा फल उसी को पहुँच जाता है। उसे उखाड़ फेंक देने से आपकी तपस्या सफल हो सकेगी, वह अंगीरस महामुनि ने बताया है।" शम्भू ने कहा।

मुनि ने जब आश्चर्य से अपनी जटाओं को टटोला तो उसके हाथ एक मणि लगी। उसे उठाकर शम्भू को देते हुए मुनि ने कहा—"तुम ही इसे रखो, बेटा, मैं सिद्धियाँ पा लूँगा।"
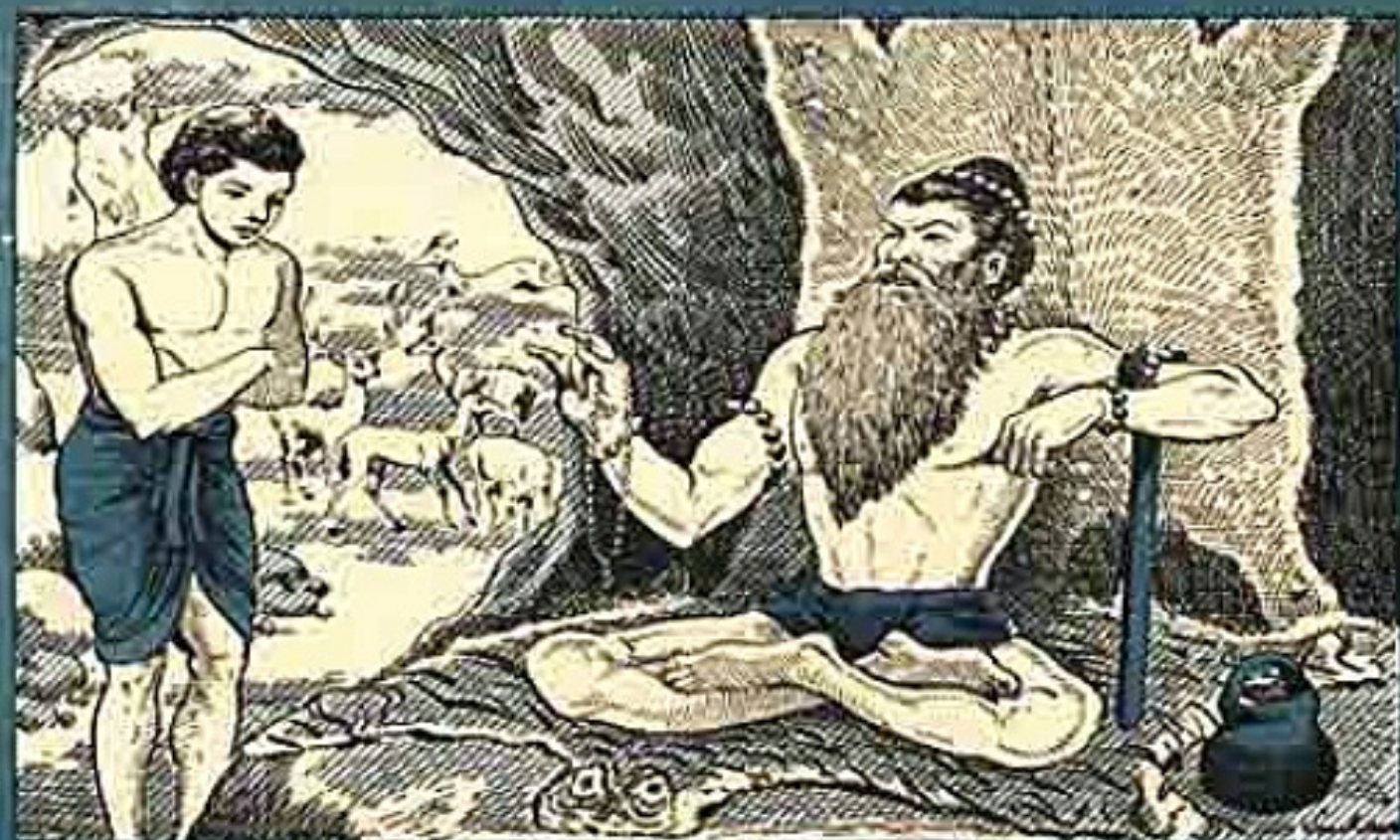
शम्भू मुनि से विदा लेकर गृहस्थी के पास गया।—"अंगीरस महामुनि ने क्या बताया है बेटा!" उसने शम्भू से पूछा।

"आपके नारंगी के पेड़ के नीचे नौ सोने से भरे कलश हैं। उनको निकाल दीजिये तो पेड़ खूब बढ़ेगा, फल देगा।" शम्भू ने कहा।

उस गृहस्थी ने सोचा कि यह अच्छा न था कि उस रहस्य के बारे में कोई और जाने। इसलिये उसी रात शम्भू की सहायता से नारंगी के पेड़ के नीचे खोदा। वहाँ सचमुच नौ सोने से भरे कलश थे।

"बेटा! तुमने मेरा बहुत उपकार किया है। इनमें से तुम एक कलश ले जाओ।" उस गृहस्थी ने कहा।

मुनि की दी हुई मणि और गृहस्थी के दिये हुए कलश लेकर शम्भू उस झोंपड़े में पहुँचा जहाँ बुढ़िया रहा करती थी।

"क्यों बेटा! मेरी पोती के बारे में महामुनि अंगीरस से पूछा था? उन्होंने क्या कहा था?" बुढ़िया ने शम्भू से पूछा।

"पूछा था नानी। जब तेरी पोती को उसके योग्य वर दिखाई देगा तो

अपने आप उसकी मूकता चली जायेगी।" यही अंगीरस महामुनि ने बताया है।

ठीक उसी समय बुढ़िया की पोती वहाँ आई।

शम्भू को देखते ही वह शर्म के कारण लाल हो गई। उसने बुढ़िया की ओर मुड़कर पूछा—"नानी, यह कौन हैं?"

बुढ़िया बड़ी चकित हुई—"तो बेटी, तू सचमुच बोलने लगी है? तब यही लड़का तेरा पति है। तुम दोनों की आज ही शादी करूँगी।"

शम्भू उससे विवाह करके, उसे, सोने से भरे कलश, मणि को साथ लेकर अपने घर पहुँचा।

इस बीच, शम्भू के लिए रोती रोती उसकी माँ अन्धी हो गई थी। वह लड़के की आवाज़ सुनकर खुश हुई पर वह उसको देख न पाई। वह अपनी बहू को भी न देख पाई।

शम्भू ने मणि निकालकर अपनी माँ के आँखों के सामने रखते हुए पूछा—"क्यों माँ, यह तो दिखाई देती है?"

माँ ने उसको आँखों के और पास ले जाकर कहा—"बेटा, दिखाई नहीं दे रही है। वह कह ही रही थी कि वह मणि उसकी आँखों पर लगी। तुरन्त उसकी आँखें ठीक हो गईं। शम्भू जान गया कि वह मणि, मुनि की तपस्या के कारण बहुत महिमावाली हो गई थी। उसकी सहायता के कारण उस पर कोई कष्ट न आये। सोने से वह अपनी ज़रूरतें पूरी करता रहा। वह पत्नी के साथ, सुखपूर्वक अपना परिवार चलाने लगा।

माहिष्मती नगर का राजा यशोवर्धन साठ साल तक निरन्तर राज्य करने के बाद बूढ़ा हो गया था। बीस वर्ष की उम्र में वह गद्दी पर बैठा था। इस लम्बे काल में उसने स्वयं कई युद्ध किये थे, राज्य की सीमाओं का विस्तार किया था। यद्यपि वह इतने बड़े राज्य का राजा था, पर बुढ़ापे में भी उसको मनः शान्ति न थी। वह सदा चिन्तित रहता। इसका कारण उसके लड़के ही थे।

यशोवर्धन के दो लड़के थे—तपोवर्धन और गुणवर्धन। बड़े लड़के तपोवर्धन को सांसारिक वस्तुओं पर किंचित भी आसक्ति न थी। वह अपना समय धर्मशास्त्रों के पढ़ने में, पंडितों से धर्म सम्बन्धी वाद विवाद करने में बिताता। हमेशा अध्ययन करता रहता।

छोटे लड़के, गुणवर्धन का कुछ और ही जीने का तरीका था। वह भोग-विलास में अपना समय बिताता। उसके लिए धर्म और अधर्म में कोई भेद न था। लुटे, लुच्चे लफँगे उसके निकट मित्र थे।

यशोवर्धन ने अपना बाकी जीवन भगवान का ध्यान करते किसी आश्रम में बिताना चाहा। उसके राज्य छोड़ने से पहिले यह आवश्यक था कि कोई ऐसा व्यक्ति मिले जो राज्य भार उठा सके नहीं तो देश में अराजकता पैदा

हो जाती। देश के लिए यह हितकर न था कि उसका बड़ा लड़का, जिसको ऐहिक वस्तुओं से वैराग्य सा था, उसके बाद राजा बने। गुणवर्धन ही एक रह गया था। उसको उत्तराधिकारी बनाने में भी कई कठिनाइयाँ थीं।

गुणवर्धन के कुकृत्यों के बारे में यशोवर्धन ने सुन रखा था। उसने उसको कई बार डाँटा डपटा भी था। यशोवर्धन ने यह भी सोचा कि हर किसी का बीस वर्ष की उम्र में उसी तरह का व्यवहार रहता है। यशोवर्धन का विचार था कि यदि राज्य का भार उसके कन्धों पर डाल दिया गया तो वह स्वयं ही सुधर जायेगा। ज़िम्मेवारी ही इस तरह की बीमारियों की अच्छी दवा है।

परन्तु इस बारे में जब उसने मन्त्री, सामन्तों से सलाह मशविरा किया तो उन्होंने गुणवर्धन के राजा बनाये जाने पर आपत्ति की। उन्होंने सन्देह प्रकट किया कि बड़े लड़के के होते हुये छोटे लड़के को यदि गद्दी पर बिठाया गया तो प्रजा में निस्सन्देह असन्तोष फैलेगा।

उन्होंने सलाह दी कि धार्मिक प्रकृति का तपोवर्धन ही राजा होने के योग्य था। और सभी का उसीमें भला था। राज्य की परम्परा भी यही थी।

यह सलाह यशोवर्धन को नहीं जँची। उसने सोचा यदि बड़ा लड़का, जिसमें क्षत्रिय गुणों का अभाव था, राजा हो गया तो वह मन्त्रियों के हाथ में कठपुतली बन जायेगा, उनकी सुनेगा। यह उसे बिल्कुल पसन्द न था।

उसे यह भी डर था कि वह राज्य, जिसे उसने इतनी कठिनाई से पाया था, उसके वंशजों के हाथ में न रहकर परायों के हाथ में चला जायेगा।

इन भय और सन्देहों के बाद—आखिर यशोवर्धन ने एक निश्चय किया। वह निश्चय यों था—अपने राज्य के सामन्तों व बड़े लोगों की एक सभा बुलाना, और उस सभा में अपनी इच्छा प्रकट करना और गुणवर्धन को राजा स्वीकार करने के लिए प्रेरित करना।

कुछ दिनों बाद, राज्य के सामन्त व बड़े लोगों की सभा बुलाई गई। सभा में यशोवर्धन ने अपने विचार व्यक्त किये। यही नहीं बड़े लड़के तपोवर्धन ने भी इस बात का समर्थन किया कि पिता के बाद गुणवर्धन का ही पट्टाभिषेक हो।

दुर्गुणी गुणवर्धन का राजा होना सभा में किसी को पसन्द न था। परन्तु यह राजा से कहने के लिए हर कोई डरा। उस समय वीरपुर के सामन्त सूर्यवर्मा ने उठकर गुणवर्धन के दुष्ट कार्यों के बारे में बताकर कहा कि वह राजा होने के बिल्कुल अयोग्य था।

सभा में करतल ध्वनि होने लगी। सूर्य वर्मा के मत का समर्थन करते हुये कई सामन्त बोले। कई ने यह भी निवेदन किया कि कुछ और काल तक यशोवर्धन को ही राज्य करना चाहिये और इस काल में तपोवर्धन में राज्य कार्य के प्रति आसक्ति पैदा करनी चाहिये।

यशोवर्धन कुछ निश्चय न कर पाया। अगर सामन्तों की बात की परवाह न करके छोटे लड़के को राजा बनाता है तो देश में विद्रोह हो सकता है। सामन्तों में सबसे अधिक शक्तिशाली सूर्यवर्मा ही इस विद्रोह का स्वयं नेतृत्व करेगा। उसने सोचा कि यदि राज्य में शान्ति रखनी है तो उसके लिए एक ही मार्ग है, वह यह कि फिलहाल राज्य परित्याग करने का निश्चय

वह स्थगित कर दे। उसने वही किया। लोगों में आनन्द और उत्साह फैल गया।

सभा के समाप्त होते ही यशोवर्धन मन्त्री को साथ लेकर अपने उद्यान में गया। मन्त्री ने तब सलाह दी कि सूर्यवर्मा से एकान्त में बातचीत करना अच्छा था। मन्त्री का ख्याल था कि सामन्तों में सबसे अधिक प्रभावशाली सूर्यवर्मा को अपने साथ कर लिया गया तो सब ठीक हो जायेगा। उसका विरोध अच्छा न था।

सूर्यवर्मा को उद्यान में बुलाया गया। यशोवर्धन ने गौरव पूर्वक अपने बगल में उसको आसन देकर कहा—"वर्मा! यद्यपि मैं तुम्हारे विचारों से सहमत नहीं हूँ। पर सभा में तुमने जो साहस, निर्भयता दिखाई, मैं उसकी प्रशंसा करता हूँ। मैं जानता हूँ वीरपुर के सामन्त हमेशा राजभक्त रहे हैं। गुणवर्धन अभी छोटा है। मेरा विचार है अगर उसे तुम जैसे अनुभवी सामन्तों का समर्थन मिला तो वह भी एक उत्तम परिपालक हो सकता है। तुम जैसे सामन्तों पर बहुत कुछ निर्भर है।

"महाराज, धर्म अधर्म का ज्ञाता, साधु स्वभाव के युवराज तपोवर्धन के उपस्थित
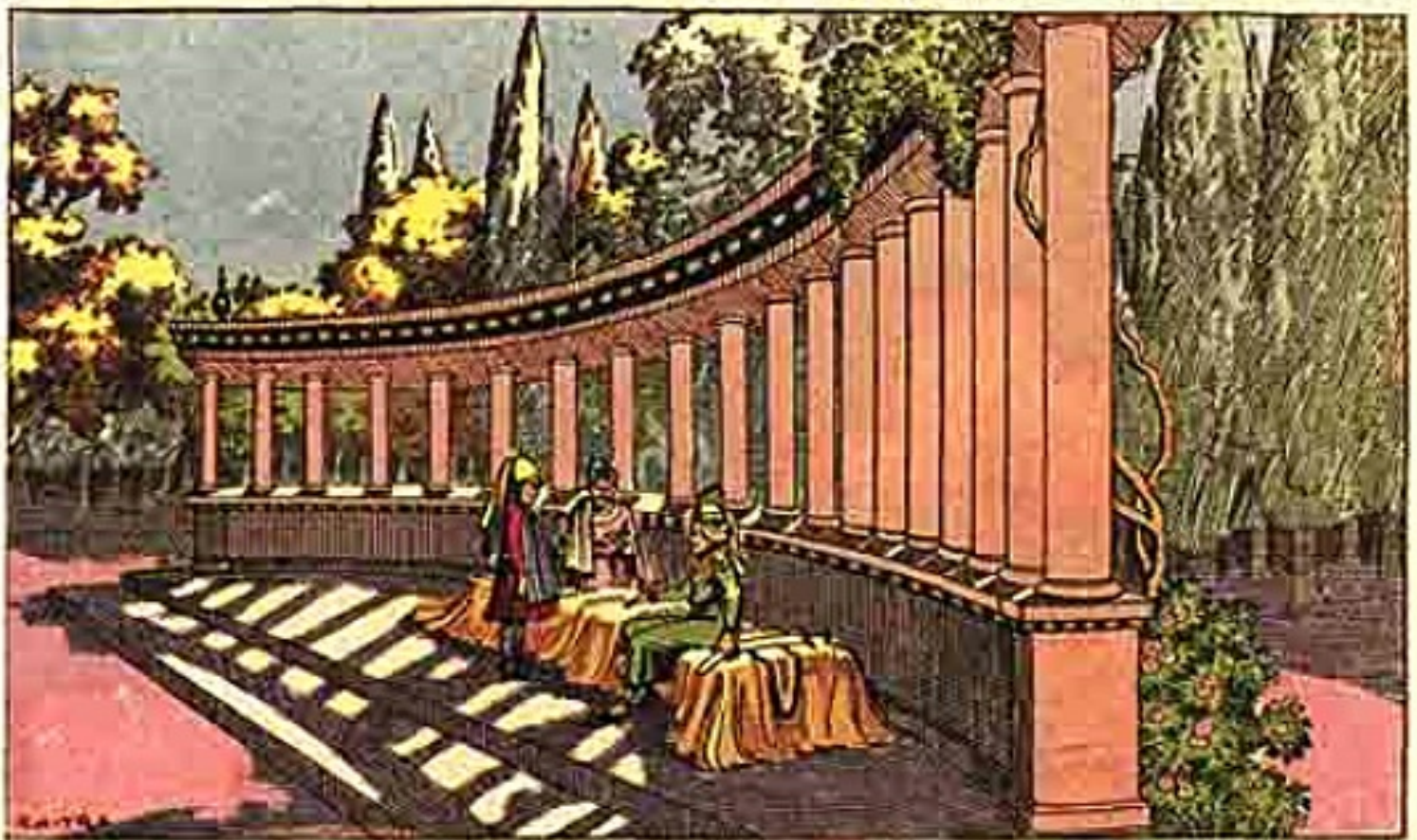
रहते, प्रजा की दृष्टि में किसी और को राज्य सौंपा जाना न्याय नहीं कहलायेगा। बल्कि यह बिल्कुल अन्याय समझा जायेगा।" सूर्यवर्मा ने कहा।

"तपोवर्धन तो विरक्त-सा है। दुनियाँ की चीज़ों से उसका कोई वास्ता नहीं। अगर वह राजा बना तो देश में अराजकता फैलेगी।" यशोवर्धन ने सोचते हुए धीमे धीमे कहा।

"उनको संसारिक वस्तुओं की ओर आकर्षित करना कोई खास बड़ी बात नहीं है। अगर उनको बड़े लड़के की ज़िम्मेवारियों के बारे में बताया गया तो वे राज्य भार स्वीकार करेंगे।" सूर्यवर्मा ने कहा।

यशोवर्धन ने अपने मन्त्री की ओर देखा। मन्त्री ने सूर्यवर्मा के विचार से सहमत होते हुये सिर हिलाया।

"यही बात है तो तपोवर्धन को तुम्हारे संरक्षण में एक साल के लिए रखूँगा। क्या तुम इस समय में उसको सांसारिक वस्तुओं के प्रति आकर्षित करके राजा होने के योग्य कर सकोगे?" यशोवर्धन ने सिर हिलाते हुए पूछा।

उसे मारने की तैयारियाँ हो रही थीं। उन लोगों का सरदार सर्पकेतु नाम का एक सामन्त था। उसके राज्य की सीमायें वीरपुर की सीमाओं से मिलती थीं। वह कई वर्षों से वीरपुर को हथियाने की कोशिश कर रहा था पर सफल न हो पाया था। उसका ख्याल था कि यशोवर्धन के छोटे लड़के गुणवर्धन को अपनी तरफ़ करने से उसका काम शीघ्र ही सफल हो सकता था।

जब गुणवर्धन को मालूम हुआ कि पिता की इच्छा का विरोध करनेवाला वीरपुर का सामन्त सूर्यवर्मा था तो वह गुस्से से आगबबूला हो उठा। उसका अनुमान था कि उसका विरोध देखकर ही और सामन्त भी विरोध करने लगे थे। परन्तु वह अकेला सूर्यवर्मा का मुकाबला नहीं कर सकता था। उसके मित्रों में भी कोई उतना साहसी व बहादुर न था। यह वह भलीभाँति जानता था।

गुणवर्धन सोच ही रहा था कि सूर्यवर्मा से कैसे बदला लिया जाय कि सर्पकेतु उसे देखने आया। दोनों ने एक दूसरे के मन की बात जान ली। सर्पकेतु ने सलाह

सूर्यवर्मा इसके लिए मान गया। उसने कहा कि वह घर जाकर शासन सम्बन्धी कार्यों को अपने लड़के चन्द्रवर्मा को सौंपकर कुछ ही दिनों में राजधानी वापिस आ जायेगा। इस पर यशोवर्धन को कोई आपत्ति न थी। वह मान गया।

सूर्यवर्मा, यशोवर्धन से विदा लेकर अपने ठहरने की जगह गया। वह उसी दिन राजधानी छोड़कर वीरपुर जाने की तैयारी करने लगा।

सूर्यवर्मा इधर घर जाने की तैयारी कर रहा था और उधर रास्ते में उसको रोककर
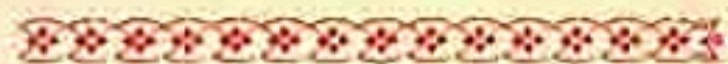
दी कि वीरपुर जाते समय सूर्यवर्मा के साथ दो चार अंगरक्षक ही होंगे, इसलिए उसे पहाड़ों में यकायक मार देना आसान था। कोई खास मुकाबला न होगा। उसने यह भी कहा कि उसके लिए ज़रूरी आदमी उसके पास थे।

"यदि आपने यह काम सफलतापूर्वक किया तो किसी दिन आपकी सहायता कर सकूँगा। यह सच है कि जब सूर्यवर्मा न रहेगा तब मैं राजा बन सकूँगा। यह आप भी जानते हैं।" गुणवर्धन ने कहा।

"इसमें कोई सन्देह नहीं है। क्योंकि मैं यह जानता था कि ऐसा ही होगा, इसलिए मैंने पहिले ही सूर्यवर्मा के प्रदेश को हड़पने के लिए चाल सोच रखी है। उसकी मृत्यु की खबर पाते ही मेरी सेना उसके प्रदेश पर आक्रमण कर देगी। सूर्यवर्मा का लड़का चन्द्रवर्मा उसका मुक़ाबला न कर सकेगा। मेरी सेना मामूली लोगों के कपड़े पहिनकर वीरपुर के किले में घुस जायेगी। हमें यशोवर्धन महाराजा को यह दिखाना है कि यह आक्रमण नहीं किन्तु प्रजा का एक क्रूर सामन्त के विरुद्ध विद्रोह है। हमें इस बात का ख्याल रखना होगा।" सर्पकेतु ने कहा।

"इसके लिए जो मदद ज़रूरी है, मैं दूँगा। मैं पिताजी से भी मौका निकालकर कहूँगा कि सूर्यवर्मा अत्याचारी है। अगर उसकी हत्या उसके प्रदेश में की गई तो वह इस बात को और भी सिद्ध करेगी।" गुणवर्धन ने कहा।

गुणवर्धन की बातों से सर्पकेतु का उत्साह और भी बढ़ गया। जिस दिन बलवान सूर्यवर्मा का विरोध समाप्त हो जायेगा उस दिन गुणवर्धन को माहिष्मती

नगर का राजा बनाना कोई कठिन काम न था। वह न केवल वीरपुर के प्रदेश को हस्तगत ही कर लेगा अपितु माहिष्मती नगर में भी काफ़ी प्रभाव प्राप्त कर सकेगा। वह सोच रहा था।

सूर्यवर्मा की हत्या की साजिश इस तरह करके सूर्यकेतु जल्दी राजधानी छोड़कर अपने साथियों को लेकर वीरपुर के सरहद पर सूर्यवर्मा के आने की उत्कंठापूर्वक प्रतीक्षा करने लगा।

सूर्यवर्मा को इस साजिश के बारे में कुछ न मालूम था। वह उसी दिन अपने नौकरों व सेवकों को लेकर अपने घर के लिए निकल पड़ा। बीच रास्ते में उसने पड़ाव किया और फिर सवेरे उठकर चल दिया।

उस दिन सूर्यास्त के समय सूर्यवर्मा अपने प्रदेश की सीमा पर पहुँच गया।

उस इलाके में पहाड़ और जंगल ही जंगल थे। सूर्यवर्मा को तो किसी खतरे का सन्देह था ही नहीं, इसलिए वह अपने घोड़े को आगे ले जाता, युवराज के विषय में उसने जो जिम्मेवारी ली थी, उसके बारे में सोचता जाता था।

यकायक कहीं आहट सुनाई दी। सूर्यवर्मा ने आहट सुनते ही घोड़ा रोककर जब पीछे मुड़कर देखा तो पत्थरों के पीछे से, पेड़ों के पीछे से मामूली कपड़े पहिने, शोर से चिल्लाते हुए कई घुड़सवारों ने उसपर हमला किया। सूर्यवर्मा भी तलवार निकाल कर शत्रुओं का सामना करने लगा। पर तबतक वह अपने साथियों से अलग कर दिया गया था। दस पन्द्रह सशस्त्र व्यक्तियों ने एक साथ उस पर आक्रमण किया।

(क्रमशः)

फिर एक बार विक्रमार्क पेड़ के पास गया। शव को उतारकर, कन्धे पर डाल पहिले की तरह श्मशान की ओर चुपचाप चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन्! इस आधी रात के समय जब तुम मोटे मोटे गद्दों पर आराम से सो सकते थे, इस तरह कष्ट तुम्हें झेलते देख मेरा हृदय पिघल रहा है। प्रायः जो प्रेम करते हैं, वे ही हर तरह के कष्टों का जान बूझकर सामना करते हैं। यह दिखाने के लिए तुझे नन्द सुनन्द की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यह कथा सुनाई।

कभी शरभ देश और साल्व देश में भयंकर युद्ध हुआ। उसमें न केवल साल्वदेश पूरी तरह हार ही गया, परन्तु

बेताल कथाएँ

साल्व राजा के वंश का भी सर्वनाश हो गया। शरभ देश के राजा सुनत्सेन ने युद्ध के समाप्त होते ही साल्व राजधानी को अपने सैनिकों से लुटवा दिया। कई सैनिकों ने दबे हुये खज़ानों के लिए कई मकान गिरा दिये। कई ने रणक्षेत्र में मरे हुए सैनिकों की चीज़ें लूटीं। उनको दो व्यक्ति ऐसे भी मिले जिनमें प्राण कहीं अटका आहें भर रहा था। सुनत्सेन के सैनिक उनको अपने राजा के खेमे पर ले गये।

ये दोनों ही नन्द और सुनन्द थे। वे साल्व वंश से सम्बन्धित थे। वे सगे भाई तो न थे किन्तु निकट बन्धु थे। थोड़ी बहुत चिकित्सा, शुश्रूषा के अनन्तर वे ठीक हो गये। क्योंकि वे उसके परम शत्रु थे, इसलिए सुनत्सेन उनको शरभ नगर ले गया और वहाँ उसने उनको आजीवन कारावास का दण्ड दिया। जिनको युद्धक्षेत्र में वीरगति मिलनी चाहिए थी, वे कारागार के नरक में सड़ने लगे। उनका जीते जी उस कारगार से निकलना असम्भव-सा था।

सुनत्सेन की मनोरमा नाम की एक बहिन थी। वह सयानी हो गई थी। पर चूँकि उसके योग्य वर न मिला था इसलिए भाई ने उसका विवाह न किया था। मनोरमा का सौन्दर्य अप्सराओं के सौन्दर्य को भी मात करता था। वह सुन्दर ही नहीं बहुत बुद्धिमति भी थी। बसन्त में, बगीचे में जाकर चुन चुनकर अपने मन पसन्द फूलों को तोड़कर लाने की उसकी आदत थी। वह एक दिन बगीचे में गई।

वह बगीचा कारागार के एक तरफ़ था। नन्द, सुनन्द की जगह से उद्यान का वह भाग दिखाई देता था। खिड़की के

पास खड़ा जब अन्यमनस्क-सा नन्द बाहर देख रहा था, तब मनोरमा उसे यकायक दिखाई दी।

"भाई, वह वनदेवी है या स्त्री? इतनी सुन्दर स्त्री को मैंने कहीं भी नहीं देखा है। मैं इसके अतिरिक्त किसी और से प्रेम न कर सकूँगा।" नन्द ने कंपती हुई आवाज़ में कहा।

सुनन्द ने भी खिड़की में से मनोरमा को देखा और वह भी प्रेम की अग्नि में यकायक तपने लगा। उनके देखते देखते ही मनोरमा आँखों से ओझल हो गई। नन्द और सुनन्द एक दूसरे को देखने लगे।

"बुरे में भी भला होता है। सोचा था कि किस्मत खराब थी इसलिए इस कैद में हम आ फँसे थे। परन्तु कैद में हैं, इसी कारण तो इस सुन्दरी से प्रेम करने का अवकाश मिला। यदि वह रोज़ दिखाई दे तो सौ साल भी सन्तोष से इस कैद में रहूँगा।" सुनन्द ने कहा।

यह सुन नन्द को उस पर गुस्सा आया।

"मैं जिस स्त्री से प्रेम कर रहा हूँ उससे तुम कैसे प्रेम कर सकते हो? क्या तुम इतना भी नहीं जानते? मैं तुम से बड़ा हूँ। उसे पहिले मैंने देखा है। देखते ही प्रेम किया है। मेरे प्रेम को सफल बनाने की कोशिश करना तो अलग तुम मुझसे ही होड़ कर रहे हो और उस स्त्री से ही प्रेम कर रहे हो, जिससे मैं प्रेम कर रहा हूँ। क्यों!" नन्द ने सुनन्द को बुरा भला कहा।
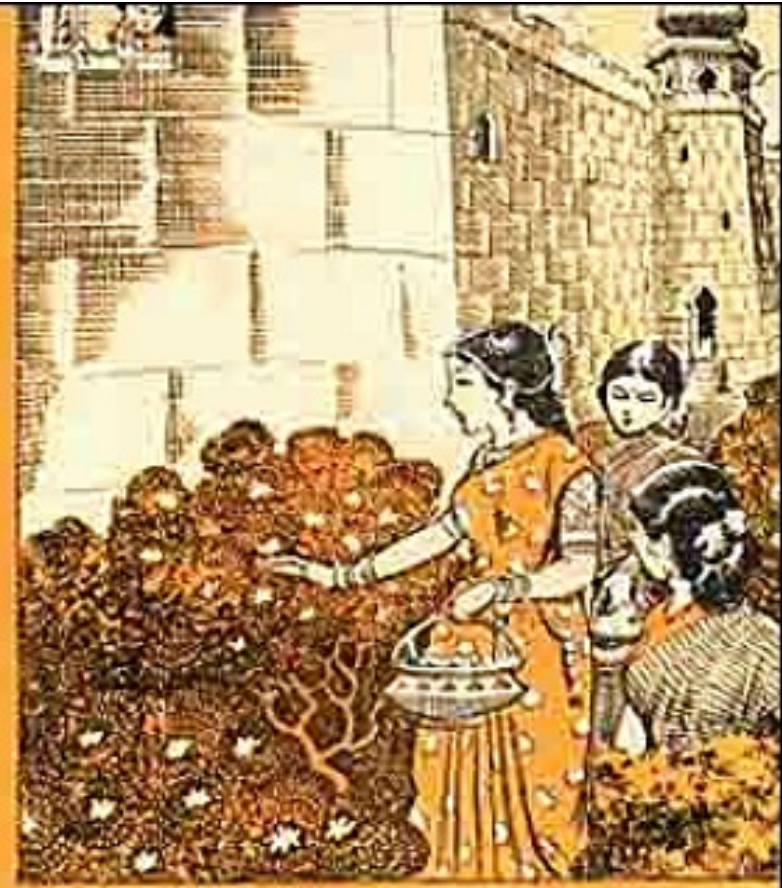
"आत्मरक्षा और प्रेम में कोई किसी का नहीं होता। मेरी इच्छा, मैं प्रेम करता हूँ। तेरे बड़प्पन से मुझे क्या!" सुनन्द ने कहा।

दोनों में बहस हुई। तू तू मैं मैं हुई। दोनों आपस में जानी दुश्मन हो गये।

प्रेम ने उन दोनों के बीच दीवार खड़ी कर दी। वे यह भी न जानते थे कि वे किस स्त्री से प्रेम कर रहे थे। उससे विवाह करने का अवकाश दोनों में से किसी को भी न था। पर यह दोनों को ही न मालूम था।

मनोरमा रोज़ बगीचे में आती और उनको दिखाई देती। दोनों जब तक उसे देखते रहते तो ऐसा अनुभव करते जैसे कि वे स्वर्ग में हों और जब वह उनको न दिखाई देती तो दोनों आपस में ज़ोर शोर से लड़ना शुरु कर देते।

इस तरह कई मास गुज़र गये।

एक दिन मगध देश का राजा सुनत्सेन को देखने के लिए आया। वे दोनों माता पक्ष में निकट बन्धु थे। सुनत्सेन ने मगध देश के राजा को बताया कि उसने कैसे साल्व देश की राजधानी को मिट्टी में मिला दिया था, कैसे वह शत्रु परिवार के नन्द और सुनन्द को पकड़ लाया था और कैसे उनको कारागार में डाल दिया था।

मगध राजा ने आश्चर्य से पूछा— "सुनन्द को कैद में डाल रखा है! हम

दोनों एक ही गुरु के शिष्य हैं। आज मैंने बहुत ही दुखद वार्ता सुनी है।"

सुनत्सेन ने कुछ देर सोचकर कहा—"अगर सुनन्द का कैद में रहना तुझे पसन्द न हो तो उसे आज ही छोड़ दूँगा।" उसने तुरत उसके छुटकारे के लिए आज्ञा दे दी। फिर उसने सुनन्द को बुलाकर उससे कहा—"तेरा भाग्य अच्छा है। इसलिए तुझे छोड़ रहा हूँ। परन्तु तुम मेरे परम शत्रु हो, इसलिए तुम्हें मेरा राज्य छोड़ने के लिए एक दिन का समय देता हूँ। चले जाओ। इसके बाद यदि तुम मेरे राज्य में दिखाई दिये तो तुम्हारा सिर तुरत कटवा दूँगा।"

सुनन्द उसी दिन अपने देश चला गया। परन्तु उसे इसका तनिक भी आनन्द न था कि वह जेल से मुक्त कर दिया गया था। साल्व देश में कहीं भी कोई रौनक न थी। जहाँ कभी राजधानी थी वहाँ अब खण्डहर ही खण्डहर थे। पहिले के परिचितों ने उसे बुलाकर रहने के लिए घर दिया। परन्तु उसे किसी प्रकार की कोई प्रसन्नता न थी। वह दुखी था।

"यह स्वतन्त्रता किस काम की! अगर कारावास में होता तो रोज अपनी प्रेयसी

को देखकर खुश हो सकता था। अब मैं उसे आँखों देख भी नहीं सकता। उसके लिए तड़प-तड़पकर मरने के सिवाय मेरे भाग्य में कुछ नहीं है। मुझसे नन्द ही कितने गुना भाग्यशाली है। वह रोज उसे देखकर ही सन्तुष्ट हो सकता है।" सुनन्द सोचा करता।

उधर नन्द भी हर रोज यों सोचा करता।

"सुनन्द कोई जादू करके कैद से छूटकर चला गया है। अब वह उस स्त्री से विवाह कर सकता है और अगर कोई विवाह करने का रास्ता न हो तो वह अपने देश वापिस जा सकता है, बड़ी सेना जमा कर सकता है। सुनत्सेन को हराकर उस स्त्री से विवाह कर सकता है और मैं लाचार यहाँ पड़ा हूँ। कुछ भी नहीं कर पाता हूँ।"

एक वर्ष बीत गया। सुनन्द का हृदय दिन प्रति दिन भारी होता जाता था। हल्का न होता था। उसे अपनी प्रेयसी को देखे एक साल हो गया था। इस बीच जाने कितनी बार नन्द उसे देखकर खुश हुआ होगा। इसी फिक्र में सुनन्द ने खाना-पीना, सोना भी छोड़ दिया।

इस तरह जीने से तो यही अच्छा है कि उसे देखता-देखता मर जाऊँ। मैं शरभ देश जाऊँगा।" सुनन्द ने निश्चय किया।

उसने आइने में देखा। पिछले एक वर्ष में उसका मुँह इतना बदल गया था कि यदि वह शरभ देश जाता भी तो उसे कोई पहिचान न सकता था। इसलिए सुनन्द ने अपना नाम सोमपाल रखा और शरभ देश के लिए निकल पड़ा।

जैसा उसका विचार था, उसको किसी ने नहीं पहिचाना। राजमहल में उसको आसानी से काम मिल गया। वह नौजवान

था, बलवान था, इसलिए उसने सब तरह के काम बड़े उत्साह से किये। परन्तु यह जानकर कि वह बुद्धिमान है, जिम्मेवारी ले सकता है, अधिकारियों ने कुछ बड़े काम दिये और उसको बड़ी नौकरी दी। इस नौकरी में उसकी आमदनी बढ़ी ही, उसका प्रभाव भी बढ़ा। क्योंकि वह औरों की तरह राजा का रुपया हजम न करना चाहता था इसलिए वह सबके लिए अच्छा हो गया। वह सिर्फ अपनी प्रेयसी को देखना चाहता था। उसे तब मालूम हुआ कि वह राजा की सगी बहिन ही थी। उसे रोज देखने का और उससे बातचीत करने का भी मौका मिल जाता था। वह सचमुच स्वर्ग में था।

एक दिन अचानक रातको नन्द कैद से भाग निकला। कैदखाने के एक सिपाही ने भागने में उसकी सहायता की। परन्तु वह नगर से बहुत दूर न गया था कि सवेरा हो गया। दिन में लोग आते-जाते थे। कोई भी उसे देखकर पहिचान सकता था। अगर वह फिर पकड़ा गया तो अवश्य ही उसे मार दिया जायेगा। किसी तरह वह बचकर साल्व देश पहुँच गया तो सेना जमा करके वह शरभ देश पर हमला कर सकता था, सुनसेन से युद्ध कर सकता था। यदि वह युद्ध में जीत गया तो उसको उसकी प्रेयसी मिल जायेगी, और यदि मर जायेगा तो उसके कष्ट समाप्त हो जायेंगे। उससे पहिले छूटे हुए सुनन्द को यह काम करना चाहिए था। अब यह काम मैं करूँगा।

यह सोचकर दिन भर पेड़-पौधों के पीछे छुपे रहकर, अन्धेरा होते ही उसने चलने का निश्चय किया। शरभ नगर के बाहर, जंगल में पौधे के पीछे छुप गया।

कुछ देर बाद, भाग्यवश सुनन्द, उस तरफ़ जंगल में टहलते हुए आया। मनुष्य की आहट सुन, पौधे के पीछे से सुनन्द को पहिचान कर, बाहर आकर उसने पूछा—"तू यहाँ क्यों है?"

सुनन्द ने नन्द को बता दिया कि नाम बदलकर राजा के यहाँ वह काम कर रहा था। नन्द ने भी बताया कि वह कैसे जेल से भागकर आया था और कैसे मनोरमा से विवाह करने के लिए युद्ध करने की सोच रहा था। "अब तू सचमुच मेरा दुश्मन है। क्योंकि तू ही मेरे रास्ते में काँटा है इसलिए हम दोनों का जीना सम्भव नहीं है। आओ, तय कर लें कि हम दोनों में से किसको रहना चाहिए।" उसने कहा।

"न तेरे पास कोई हथियार है, न मेरे पास ही। हम कैसे युद्ध कर सकते हैं? अगर तुम कल तक यहाँ रहे तो मैं दो तल्वार ले आऊँगा।" सुनन्द ने कहा।

नन्द मान गया। उस दिन वह कहीं न गया। वहीं पौधों के पीछे छुपा रहा। अगले दिन सवेरे सुनन्द दो तल्वार लेकर वहाँ आया। उन दोनों में भयंकर युद्ध प्रारम्भ हुआ।

उसी दिन सुनत्सेन, अपनी पत्नी और बहिन को लेकर, रथ पर चढ़ हरिणों का शिकार खेलने निकला। रथ के जंगल में घुसते ही, उन्हें तल्वारों की आवाज़ सुनाई दी। राजा ने जाकर देखा तो नन्द और सुनन्द आपस में लड़ रहे थे।

"ठहरो! जो कोई तल्वार उठायेगा उसे मार दूँगा।" सुनत्सेन यह कहकर उनके पास गया। फिर उसने पूछा—"तुम कौन हो?"

नन्द ने अपनी और सुनन्द की कहानी सुनाई। उसने कुछ न छुपाया। राजा को वह

सुनकर आश्चर्य हुआ। उसे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि उसकी बहिन के लिए दोनों अपने प्राणों की बाजी लगा रहे थे। सुनन्द कैद से मुक्त होने के बाद भी केवल मनोरमा को देखने के लिए अपने प्राणों की परवाह न कर शरम देश वापिस आया था।

नन्द उससे अपने प्रेम का बँटवारा न करना चाहता था। इसलिए वह तय कर लेना चाहता था कि वह मरेगा नहीं तो उसे मारेगा। दोनों का प्रेम आश्चर्यजनक था।

सुनत्सेन ने दोनों को क्षमा कर दिया। वह चाहता था कि दोनों को प्रेम का फल मिलना चाहिए था। परन्तु मनोरमा दोनों में से किसी एक से ही विवाह कर सकती थी। इसलिए यह जानने का भार मनोरमा पर ही छोड़ दिया कि उन दोनों में से किसका प्रेम अधिक था। उसने मनोरमा से कहा—"अगर इनमें से किसी एक के साथ तुझे शादी करने का मौका मिला तो तू किससे शादी करेगी!"

मनोरमा ने बिना हिचके नन्द को चुना। सुनत्सेन ने उनका वैभव के साथ विवाह किया और साल्व देश को भी उसने नन्द को वापिस कर दिया।

सुनन्द भी करता तो क्या करता? वह हताश हो पागल-सा इधर उधर घूमने लगा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजन्! यह बताओ मनोरमा ने यह कैसे निश्चय किया कि नन्द और सुनन्द में, नन्द को उस पर अधिक प्यार था! अपने सेवक सुनन्द को छोड़कर उस पर हमला करने की सोचने वाले नन्द को जब उसकी बहिन ने चुना तो उसने क्यों नहीं आपत्ति की! अगर इन प्रश्नों का तुमने जान बूझकर उत्तर न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।

"नन्द का प्रेम सुनन्द के प्रेम से अधिक था। इस बात में कोई सन्देह नहीं है। सुनन्द ने प्रेम तो किया था पर प्रेम के लिए उसने उतने बलिदान, कठिन काम करने की न सोची थी। उसे पत्नी बनाने के लिए उसने कोई काम न किया था। शरभ देश वापिस आना साहसिक अवश्य था। पर उसने यह तभी किया था, जब उसे मालूम हो गया था कि उसे कोई पहिचान न सकेगा पर नन्द की बात दूसरी थी। उसका उद्देश्य ही मनोरमा से विवाह करना था। इसलिए वह सुनन्द की स्पर्धा सह न सका। उसका कैद से छुटना, सुनन्द की खबर लेने के लिए एक दिन शरभ देश में ही रह जाना, सेना जमा कर राजा को जीतने का निश्चय करना—आदि, काम उसने किये। वे बड़े ही साहसिक कार्य थे। इसलिए मनोरमा ने उसका प्रेम स्वीकार किया। पर सुनत्सेन के आपत्ति करने के लिए भी एक कारण था। मनोरमा के लिए नन्द ने सुनत्सेन से युद्ध करने की सोची थी। पर उसका जीतना सम्भव न था। साल्व देश तो कभी का निर्बल हो चुका था। वह जब शक्तिशाली था तभी उसने उसे पराजित किया था। उस हालत में नन्द उसका भयंकर शत्रु हो सकता था, ऐसी बात थी ही नहीं। प्रेम के कारण ही नन्द ने युद्ध की बात सोची थी। यह जानकर, सुनत्सेन विवाह के लिए मान गया।" विक्रमार्क ने कहा।

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर तुरन्त पेड़ पर चढ़ गया।

(कल्पित)

चालाक चोर

किसी ज़माने में अरब के एक देश में दो चोर रहा करते थे। उनमें एक दिन में जेबें काटा करता था। दूसरा रात को सेंध लगाकर घरों में चोरी किया करता।

इन चोरों ने एक सुन्दर लड़की को देखकर उससे विवाह करने का निश्चय किया। क्योंकि दोनों एक ही लड़की से प्रेम करते थे इसलिए वह लड़की निश्चय न कर पाती थी कि किससे विवाह करे। उसने उनसे इस प्रकार कहा—"तुम दोनों चोरी करके जीवन निर्वाह करते हो। तुम दोनों ही मेरा भरण-पोषण कर सकते हो। परन्तु तुम में से जो अधिक चतुर होगा मैं उसी से विवाह करना चाहती हूँ। इसलिए अगर तुम दोनों ने तय कर लिया कौन चतुर है तो मैं उससे विवाह कर सकूँगी।"

चोरों ने उसकी बात मान ली। उन्होंने एक दूसरे को अपनी चालाकी दिखाने का निश्चय किया।

"पहिले मैं तुझे अपना हुनर दिखाता हूँ फिर तुम अपना हुनर मुझे दिखाना। उसके बाद हम यह तय कर लेंगे कि हममें कौन अधिक चतुर है।" दिन के चोर ने रात के चोर से कहा।

रात का चोर यह मान गया।

दोनों मिलकर सर्राफ़ों के बाज़ार में गये। उन्होंने देखा कि एक महाजन हर दुकानदार के पास जाता और अपना कर्ज़ और सूद वसूल करता गली में चलता जाता था।

"उस महाजन को देखो। उसकी जेब में बहुत-सा रुपया होगा। देखते रहना मैं उसे चुरा लाऊँगा।" दिन के चोर ने कहा।

मोहम्मद अलि

यह सुन रात का चोर हैरान रह गया। वह रात के अन्धेरे में चोरी कर सकता था। परन्तु दिन दहाड़े, लोगों के सामने वह जेबें काटना न जानता था। किन्तु यह हुनर दिन के चोर को आता था। वह उस महाजन के पीछे दो चार कदम चला। आसानी से उसकी जेब में से मोहरों की थैली निकाल ली और अपने दोस्त से जा मिला।

"तू सचमुच बहुत चतुर है।" रात के चोर ने कहा।

"मेरी चालाकी इस थैली के उड़ा लेने में नहीं है। मैं न्यायाधिकारी से भी कहलाकर दिखलाऊँगा कि यह थैली मेरी है। ऐसा न करने पर सिपाही मेरे पास से यह ले लेंगे। इसलिए मैं पहिले ही यह सिद्ध कर दूँगा कि यह माल मेरा है।" दिन के चोर ने कहा।

"क्या यह सम्भव है!" रात के चोर ने पूछा।

"तुम ही देख लेना।" कहकर दिन का चोर अपने दोस्त को एक गली में ले गया। वहाँ उसने थैली खोलकर मोहरें गिनीं। उसमें ठीक पाँच सौ मोहरें थीं। उनमें से उसने दस लेकर अपनी जेब में डाल लीं। उसने ताँबे की अपनी एक अंगूठी उस थैली में डालकर, थैली को पहिले की तरह बाँध दिया।

फिर वह सर्राफ़ों की गली में महाजन के पीछे पीछे गया। उसने फिर वह थैली चालाकी से उसकी जेब में सरका दी।

तब महाजन अपनी दुकान में जाने के लिए तैयार हो रहा था।

इतने में दिन का चोर चिल्लाया—"चोर, चोर, पकड़ो, पकड़ो।" वह महाजन पर कूदा। उसे दो चार मुक्के जमा दिये।

सब इकट्ठे हो गये। जेब कतरे ने उनसे कहा—"यह चोर है। देखो, देखने में कितना सीधा-सादा है। मेरी मोहरों की थैली लेकर इस तरह जा रहा है जैसे कुछ मालूम ही न हो।"

महाजन पर सभी को गुस्सा था। सबने कहा—"कचहरी ले जाओ।" जेब कतरा व्यापारी को, हाथ बाँधकर कचहरी ले गया। उसने न्यायाधिकारी से कहा—"इस बूढ़े ने मेरी मोहरों की थैली चुरा ली है। आपको फ़ैसला करना होगा।"

"चोरी गई थैली कहाँ है?" न्यायाधिकारी ने पूछा।

"जेब में डाल ली है। मैंने स्वयं अपनी आँखों देखा है।" जेब कतरे ने कहा।

महाजन की जब जेब टटोली गई तो उसमें थैली थी। महाजन ने घबराकर कहा—"यह तो मेरी थैली है। अपना कर्ज वसूल कर रहा था कि इस आदमी ने मुझ पर चोरी का अपराध लगा दिया। मैंने इस आदमी को कहीं देखा तक नहीं है।"

"अगर वह तेरी ही थैली है तो बता उसमें क्या है?" न्यायाधिकारी ने पूछा।

"उसमें पाँच सौ मोहरें हैं, बस।" महाजन ने निश्चिन्त होकर कहा।

"यह झूट है। उसमें चार सौ नब्बे मोहरें हैं और मेरी ताम्बे की अंगूठी है। यह चोर आपके सामने झूट बोल रहा है।" जेब कतरे ने कहा। थैली खोलकर देखी गई तो उसमें चार सौ नब्बे मोहरें और तांबे की अंगूठी थी। न्यायाधिकारी ने उस थैली को जेबकतरे को दे दिया और महाजन को सौ कोड़ों की सज़ा दी।

जब रात का चोर थैली लेकर चला आ रहा था तो जेब कतरे ने पूछा—"कैसे रहे हमारे करतब?"

"जेबों के काटने में तेरी चालाकी सचमुच आश्चर्यजनक है। परन्तु रात में चोरी कैसे की जाती है, यह भी मैं आज तुझे दिखाऊँगा।" सेंध लगानेवाले चोर ने कहा।

उस दिन रात को अन्धेरा होते ही एक रस्सी की सीढ़ी लेकर, रात का चोर जेब कतरे को साथ लेकर राजमहल के पास गया।

"यह क्या! राजमहल में क्यों यों घुस रहे हो?" जेब कतरे ने भय से काँपते हुए पूछा।

"हाँ हाँ, मामूली घरों में घुस जाने में कौन-सी बड़ी बात है?" कहकर रात के चोर ने रस्सी की सीढ़ी दीवार पर फेंकी। जब वह एक जगह ठीक जम गई तो वह उस पर चढ़ गया। चढ़ते-चढ़ते उसने जेब कतरे को भी ऊपर बुलाया। और जेब कतरा इतना हैरान कि उसकी जान में जान न थी।

दोनों राजमहल के आंगन में आये। रात का चोर, राजमहल के दरवाजे को एक तरफ हटाकर, अन्दर जाकर, राजा के कमरे की ओर चला। जेब कतरा भी डरता डरता उसके पीछे चला।

शयन कक्ष में राजा सो रहा था। एक गुलाम राजा के पैर दाबता ऊँघ रहा था। जेब कतरे को पासवाले कमरे में रहने का इशारा करके, रात का चोर बिना आहट के चलता गुलाम के पीछे गया। उसे पीछे से पकड़कर उसके मुख में कपड़े ठोंस दिये। रस्सी से बाँधकर उसे कमरे के एक कोने में डाल दिया। उसकी जगह स्वयं बैठकर राजा के पैर दबाने लगा।

उसने जान बूझकर राजा के पैर इतने ज़ोर से दबाये कि राजा की नींद उचट गई। रात के चोर ने आवाज़ बदलकर कहा—"लगता है, हुज़ूर की नींद टूट गई। एक छोटी-सी कहानी सुनाता हूँ। गौर कीजिये। एक शहर था। उसपर कोई राजा राज्य किया करता था। उस शहर में एक जेब कतरा और एक सेंध लगानेवाला चोर रहा करते थे। उन दोनों में एक समस्या पैदा हुई कि उनमें कौन अधिक चतुर था। पहिले जेब कतरा अपनी चालाकी दिखाने के लिए रात के चोर को सर्राफ़ों की गली में ले गया—" कहकर उसने सारा किस्सा सुनाया। फिर उसने यह भी सुनाया कि कैसे वह राजमहल में

आया था, कैसे वह गुलाम को अलग करके उसकी जगह आ बैठा था। फिर उसने पूछा—"महाराज! आप ही बताइये कि इन दोनों में कौन अधिक चालाक है? जेबकतरा कि सेंध लगानेवाला?"

राजा ने यह समझकर कि यह कोई किस्सा है, तुरत कहा—"सेंध लगाने वाला चोर ही।" यह बात दूसरे कमरे में खड़े जेब कतरे को भी सुनाई दी। फिर वह राजा के पैर तब तक दबाता रहा जबतक उसे नींद न आगई। उसके बाद वह अपने दोस्त के साथ राजमहल से चला आया।

अगले दिन जब राजा उठा तो उसने देखा कि गुलाम बंधा हुआ था। उसे मालूम हुआ कि उसने जो कुछ सुना था, वह कहानी न थी, घटना थी। उसे यह भी मालूम हो गया कि उस कहानी को सुनानेवाला रात का चोर ही था। उसने उसकी अक़्लमंदी की प्रशंसा की। फिर उसने घोषणा निकलवाई कि अगर पिछली रात को मेरे कमरे में आनेवाले चोर ने मुझे सूचना दी तो मैं उसे नौकरी दूँगा।

यह घोषणा सुन सेंध लगानेवाले चोर ने राजा के दर्शन किये। अपने वचन के अनुसार राजा ने अपने यहाँ उसको अच्छी नौकरी दी।

राजा का फैसला क्योंकि जेब कतरे ने स्वयं अपने कानों सुना था इसलिए वह कुछ कह न सकता था। उस लड़की ने जिस पर दोनों का प्रेम था, सेंध लगाने वाले चोर से शादी कर ली। और इस तरह वह राज्य के एक बड़े कर्मचारी की पत्नी हो गई।

जादू का घोड़ा

[२]

[बसन्तोत्सव पर, तीन सिद्धों ने आकर फारस के बादशाह को तीन विचित्र चीज़ें भेंट में दीं। उनमें से एक जादू का घोड़ा था। इन भेंटों के बदले में बादशाह ने अपनी तीनों लड़कियों का उन तीनों से विवाह करने का निश्चय किया। जादू का घोड़ा जिसने दिया था, वह बहुत बूढ़ा था। बादशाह की छोटी लड़की बहुत सुन्दर थी। वह उससे शादी न करना चाहती थी। वह रोने लगी, उसको रोता देख, बादशाह के लड़के कमाल अम्मार ने शादी पर आपत्ति प्रकट की। फिर उसने जब जादू के घोड़े कि परीक्षा करनी चाही तो बूढ़े सिद्ध ने उसे उड़ने की कल तो बताई पर उतरने की न बताई। इसलिए अम्मार आकाश में उड़ तो गया पर वापिस न आया। बादशाह ने सिद्ध को पिटवाकर कैदखाने में डलवा दिया और स्वयं दुख सागर में डूब गया।]

इस बीच जादू का घोड़ा इसतरह उड़ रहा था मानों शीघ्र ही सूर्य तक पहुँच जायेगा। राजकुमार अम्मार घबराने लगा।

"उस बूढ़े सिद्ध ने मुझे नष्ट करने के लिए ही यह किया है। उसे शायद मुझपर गुस्सा आ गया है कि मैंने उसे अपनी छोटी बहिन से शादी करने न दी। अब क्या करूँ! इस आपत्ति से कैसे बाहर निकलूँ! जब इस घोड़े में ऊपर चढ़ने के लिए कल है तो उतरने के लिए भी होगी।

श्री विमल चौधरी

यह सोचकर वह घोड़े की सावधानी से परीक्षा करने लगा। घोड़े की जीन के दायें ओर उसे एक कील-सी दिखाई दी। उसका कुतूहल बढ़ा।

"घोड़े पर इसके सिवाय और कुछ नहीं दिखाई देता।" यह सोच उसने उसे दबाया। वायुवेग से जाता हुआ घोड़ा, धीमे धीमे रुकता गया। थोड़ी देर में वह आकाश में रुककर नीचे उतरने लगा। उतरते समय भी उसकी गति बढ़ती जाती थी। राजकुमार डरने लगा कि अगर वह इस गति से उतरा तो घोड़ा भूमि से टकरायेगा और उसका नामों निशां भी न रहेगा। पर ऐसा न हुआ। भूमि पास आई तो घोड़े की गति भी मंद हो गई। आखिर, वह पक्षी की तरह मंड़राता धीमे से भूमि पर उतरा। राजकुमार की जान में जान आई। उसे घोड़े का रहस्य मालूम हो गया था और उसकी जान भी बच गई थी। इसलिये उसने अल्लाह को दुआ दी।

फिर उसने उस घोड़े को किस तरह चलाया जाता था सब घुमा फिराकर जाना। वह घोड़ा केवल उड़ता, उतरता ही न था, आगे पीछे भी चलता था। कभी वायुवेग से कभी धीमे धीमे भी चल सकता था। लगाम से घोड़ा इधर उधर भगाया जा सकता था। इन सब का राजकुमार ने अभ्यास किया। सब कुछ जानने के बाद वह घोड़े को आकाश में कुछ दूर ले गया।— मामूली गति से, अनेक नदी, पहाड़, नगर, देश, समुद्र पार करता वह निकल पड़ा। इस बार उसने कई ऐसी चीज़ें देखीं, जो उसने पहिले न देखी थीं। कितने ही नये नगर, व देशों को देखकर उसकी खुशी का ठिकाना न था।

वह जब यों आकाश में जा रहा था तो उसे नीचे एक सुन्दर नगर दिखाई दिया। उस नगर के मकान चित्रों की तरह सुन्दर जान पड़ते थे। नगर में हरियाली की कालीन-सी बिछी हुई थी। उन पर हरिण वगैरह दौड़ रहे थे। उस देश में जहाँ देखो, वहाँ जल प्रवाह थे। बहुत ही सुन्दर दृश्य था।

राजकुमार अम्मार अपने घोड़े पर उस नगर का चक्कर लगा गया। वहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य का आनन्द लेते हुये उसने सोचा—"मालूम करना है कि यह नगर क्या है, यह किस देश में है।" ठीक उसी समय सूर्यास्त हो गया और अन्धकार छाने लगा।

"यह रात आज यहीं बिताऊँगा। कल सवेरे उठकर घर जाऊँगा और पिता जी से और मित्रों से, जो आश्चर्य जनक चीज़ें मैंने देखी हैं, जो अनुभव मुझे हुये हैं, उनके बारे में कहूँगा।" उसने सोचा।

वह सोच रहा था कि घोड़ा कहाँ उतारे कि नीचे राजमहल-सा कुछ दिखाई दिया। वह ठीक नगर के बीचों बीच था। उसके
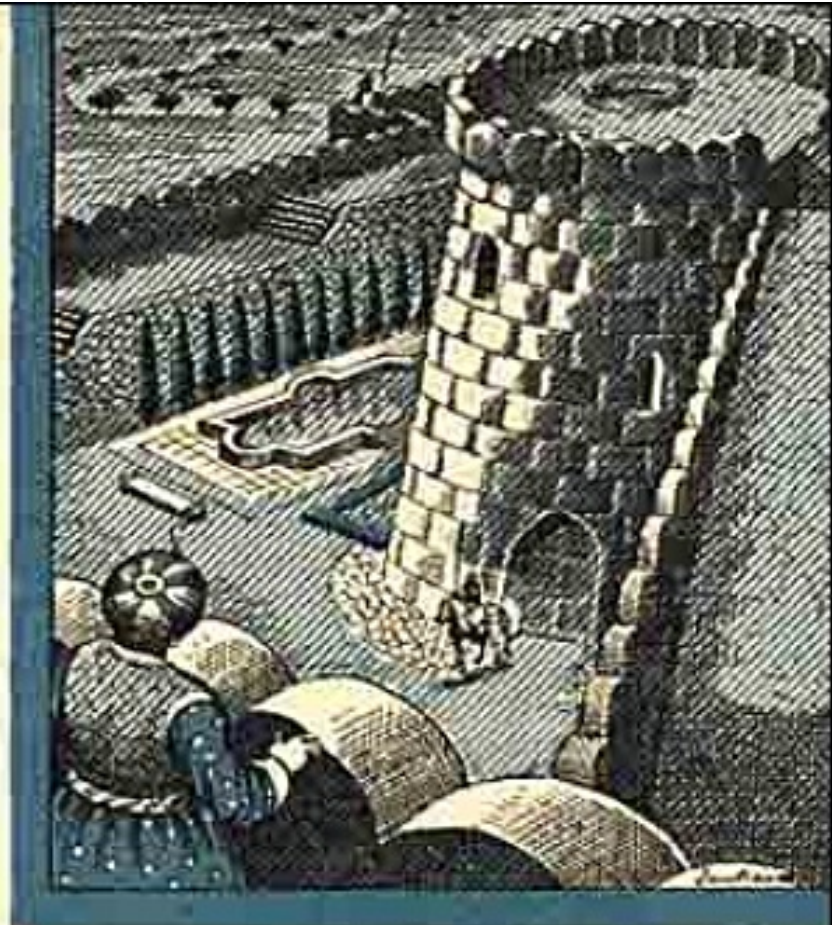
चारों ओर बुर्ज थे। कवच पहिने, भाले, बाण आदि लेकर चालीस सैनिक वहाँ पहरा दे रहे थे। आसपास लोगों की चहल पहल थी।

राजकुमार ने कील दबाकर, घोड़े को राजमहल के उपरले भाग पर उतारा। घोड़े से उतरकर, वह उसे देखकर बड़ा खुश हुआ। उसने सोचा—"इस घोड़े का बनानेवाला कोई मामूली आदमी नहीं है। अगर मैं अलाह की मेहरबानी से घर पहुँच गया तो उस बूढ़े को कितने ही ईनाम दूँगा। वह अवश्य कोई न कोई सिद्ध पुरुष है।"

काफ़ी अन्धेरा हो गया। परन्तु जब तक राजमहल में लोगों का चलना-फिरना बिल्कुल बन्द न हो गया तब तक वह ऊपर से न आया। बहुत देर हो गई। उसे भूख लगी। आखिर वह भोजन की तलाश में ऊपर से सीढ़ियाँ उतरकर धीमे धीमे आया।

उसे वहाँ एक भवन-सा दिखाई दिया। वहाँ संगमरमर का फर्श था। उस पर सफ़ेद चाँदनी पड़ रही थी। फ़र्श चमचमा रहा था। कहीं किसी के आने जाने की आवाज न थी। सर्वत्र नीरवता थी।

चकित होकर इधर उधर देखते हुए उसने सोचा—"क्या जरूरत है इसकी? आज रात जैसे तैसे छत पर ही काट दूँगा, कल सवेरे उठकर अपने देश चला जाऊँगा।" वह यह सोच रहा था कि राजमहल के अन्दर उसे एक मशाल दिखाई दी। उसकी रोशनी में, अन्तःपुर के द्वार के बाहर, हिंजड़ा गुलाम खुर्राटे मारता दिखाई दिया। उसका बिस्तर रास्ते के बीच में था। मशाल की रोशनी में उसकी तलवार चमक रही थी। उसकी भोजन की थैली काले पत्थर के एक खम्भे से
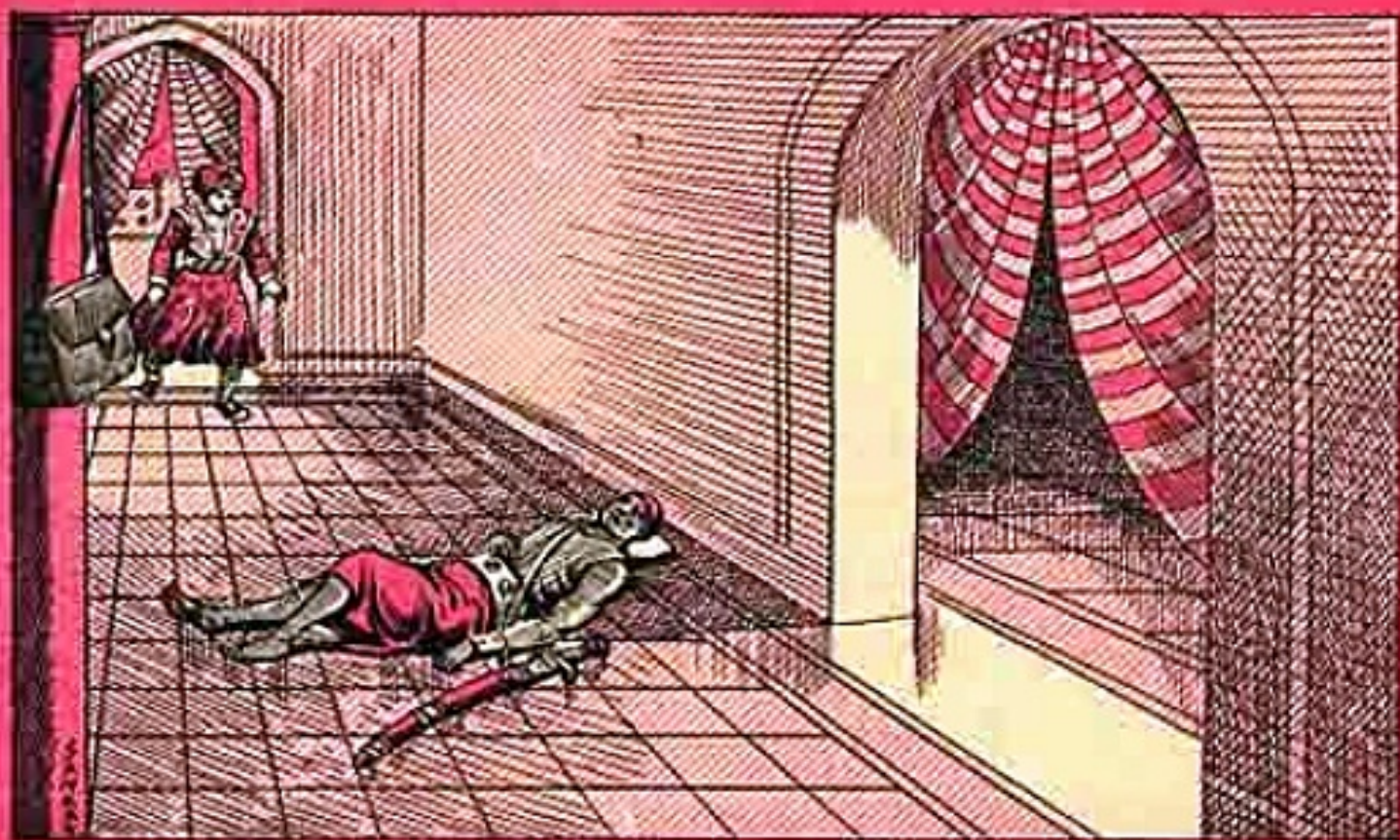
लटक रही थी। वह सो रहा था फिर भी भयंकर लगता था।

उस नीग्रो गुलाम को देखते ही राज-कुमार को कँपकँपी-सी हो गई। वह हथेली पर जान रखकर, धीमे धीमे पैर रखता भोजन की थैली के पास गया। उसे खम्भे से उतारकर अलग चला आया। उसमें स्वादिष्ट खाने की चीजें थीं, राजकुमार ने उन्हें खाया और पास के फव्वारे में पानी पीकर, उसे यथास्थान लटका दिया। नीग्रो गुलाम तब भी नाक बजाता जाता था। राजकुमार ने उसके तलवार की म्यान लेकर, तलवार बाहर खींची। शब्द हुआ। मगर तब भी वह न उठा।

राजकुमार हिम्मत करके अन्तःपुर में गया। थोड़ी दूर जाने के बाद उसे एक और दरवाज़ा दिखाई दिया। उस दरवाज़े पर मलमल का परदा लटक रहा था। वह परदा हटाकर एक विशाल शयन कक्ष में घुसा। उस कमरे में हाथी दान्त के पलंग पर एक बहुत ही सुन्दर स्त्री सो रही थी। वह उस देश की राजकुमारी थी। उसके पलंग के चारों पायों के पास चार दासियाँ

फ़र्श पर पड़ी सो रही थीं। उनके सिवाय वहाँ और कोई न था।

राजकुमार अम्मार, राजकुमारी का सौन्दर्य देखकर स्तम्भित हो, खम्भे की तरह खड़ा हो गया। इतने में राजकुमारी उठी। एक अजनबी को वहाँ देखकर वह न डरी, बल्कि उसने पूछा—"तुम कौन हो?"

अम्मार ने उसके पास जाकर कहा—"तुम से प्रेम करके, तुमसे शादी करने आया हूँ।" उसने निर्भय हो राजकुमारी को जवाब दिया।

"तुम्हें अन्दर किसने आने दिया?" राजकुमारी ने फिर पूछा। उसका नाम शक्स अल नहर था।

"अल्लाह ने आने दिया। मेरी किस्मत मुझे यहाँ लाई है।" अम्मार ने उसकी तरफ़ देखते हुए कहा।

"कल मुझसे विवाह करने के लिए हिन्दू देश से कोई राजकुमार आया था। कहीं वह तुम ही तो नहीं हो? वह क्योंकि सुन्दर न था इसलिए मेरे पिता जी शादी के लिए राजी न हुये। तुम तो खूबसूरत हो।" राजकुमारी नहर ने बिना हिचकिचाये कहा।

यह सुन राजकुमार बड़ा खुश हुआ। उसके जवाब देने से पहिले दासियाँ उठ गईं। अजनबी को देखकर घबराते हुए उन्होंने ऊँची आवाज में पूछा—"मालकिन! ये कौन हैं?"

"मुझे नहीं मालूम! आँखें खोलीं थी तो ये सामने थे। शायद ये वे ही राजकुमार हैं, जो कल मुझसे शादी करने आये थे!" नहर ने कहा।

"नहीं, नहीं। वह तो बदसूरत थे। हमने देखा था।" कहकर दासियों ने हिंजड़े

गुलाम को उठाया। उसे डाँटा डपटा—"क्यों! क्या तुम इसी तरह अन्तःपुर का पहरा देते हो! इस आदमी को क्यों अन्दर आने दिया! हम तुम्हारी शिकायत करेंगे।"

निग्रो गुलाम ने तल्वार निकालनी चाही, पर उसकी म्यान खाली थी। वह और भी घबरा गया। शयन कक्ष में आकर उसने राजकुमार से पूछा—"आप आदमी हैं या भूत?"

"नीच कहीं का। मुझे भूत कहता है! देख तुझे क्या करता हूँ।" अम्मार तल्वार लेकर उस पर लपका।

"मुझे यों ही न मारिये। कृपया बताइए कि आप कौन हैं।" गुलाम ने पूछा।

"मैं राजा का दामाद हूँ। इसलिए ही मैं उस जगह आया हूँ, जहाँ मेरी पत्नी है।" राजकुमार ने कहा।

"हुज़ूर, जब आप यह कहें तो मैं क्या कह सकता हूँ।" यह कहकर गुलाम भागकर राजा को उठाने लगा। जोर जोर से भय के कारण चिल्लाने लगा। वह पागल-सा हो गया।

राजा ने उसको भयभीत देखकर पूछा—"क्यों, क्या बात है! जल्दी बताओ।"

"महाराज, राजकुमारी के कमरे में कोई भूत घुस गया है और अपने को आपका दामाद बता रहा है। तुरन्त जाकर आप उस भूत को भगाइये।" गुलाम ने कहा।

राजा को इतना गुस्सा आया कि उसे मारने की इच्छा हुई। "मूर्ख, तुमने वहाँ रहकर भी उस भूत को क्यों अन्दर जाने दिया!" तुरन्त वह राजकुमारी के कमरे में

गया। वहाँ उसकी दासियों से पूछा—"क्यों, क्या बात है?"

"हम कुछ नहीं जानते, हुज़ूर! जब हम उठीं तो ये राजकुमारी से बातें कर रहे थे। जाने कहाँ से और कैसे ये आये!" दासियों ने नीचे मुँह करके डरते हुए कहा।

राजा अम्मार के पास आने लगा। इस बीच राजकुमार ने राजकुमारी से पूछा—"यही तुम्हारे पिता हैं?" उसके हाँ कहने पर वह राजा की ओर लपका और उसे उसने खूब मारा पीटा।

उसे देखकर राजा को डर लगा। "ज़रा ठहरो! तुम राजकुमार हो या भूत?" उसने पूछा।

"मैं राजकुमार हूँ। यह जानकर कि तुम्हारी लड़की बहुत सुन्दर है उससे शादी करने आया हूँ। इसलिए सब सुन ली, वरना और कोई मुझे भूत बताता तो उसका सिर एक चोट में धड़ से अलग कर देता।" अम्मार ने कहा।

"अगर तुम सचमुच राजकुमार हो तो चोरी चोरी अन्त:पुर में क्यों आये? फिर ऊपर से अपने को मेरा दामाद भी बताते

हो! अगर मैं अब अपने सैनिकों को बुल्वाकर तुम्हें मरवा दूँ तो तुम्हारी कौन पूछनेवाला है!" राजा ने अम्मार से रौब से पूछा।

"आप तो अनजाने ही बातें कर रहे हैं। आपको मुझ से अच्छा दामाद कहाँ मिलेगा! अगर सैनिकों को बुल्वाकर आपने उन्हें जानने दिया कि आपकी लड़की के कमरे में कोई पराया आदमी आया है तो बदनामी आपकी लड़की की है न!" अम्मार ने कहा।

"हाँ यह ठीक है। परन्तु मेरी लड़की का विवाह सब के सामने होना चाहिए। अगर बिना किसी के जाने हो गई तो वह भी तो मेरे लिए अपमानजनक है न! इसलिए काज़ी के सामने तुम ही मेरी लड़की से शादी करो।" राजा ने ठंडे होते हुए कहा।

"अच्छा, वैसे ही शादी करूँगा। परन्तु मैं उसके लिए कुछ नियम बताऊँगा। अगर वे आप मान गये तो आपकी इच्छानुसार शादी होगी।" अम्मार ने कहा।

"क्या हैं वे नियम!" राजा ने आश्चर्य से पूछा।

"एक तो यह है कि आप मुझ से तलवार लेकर लड़ें। अगर आप हार गये
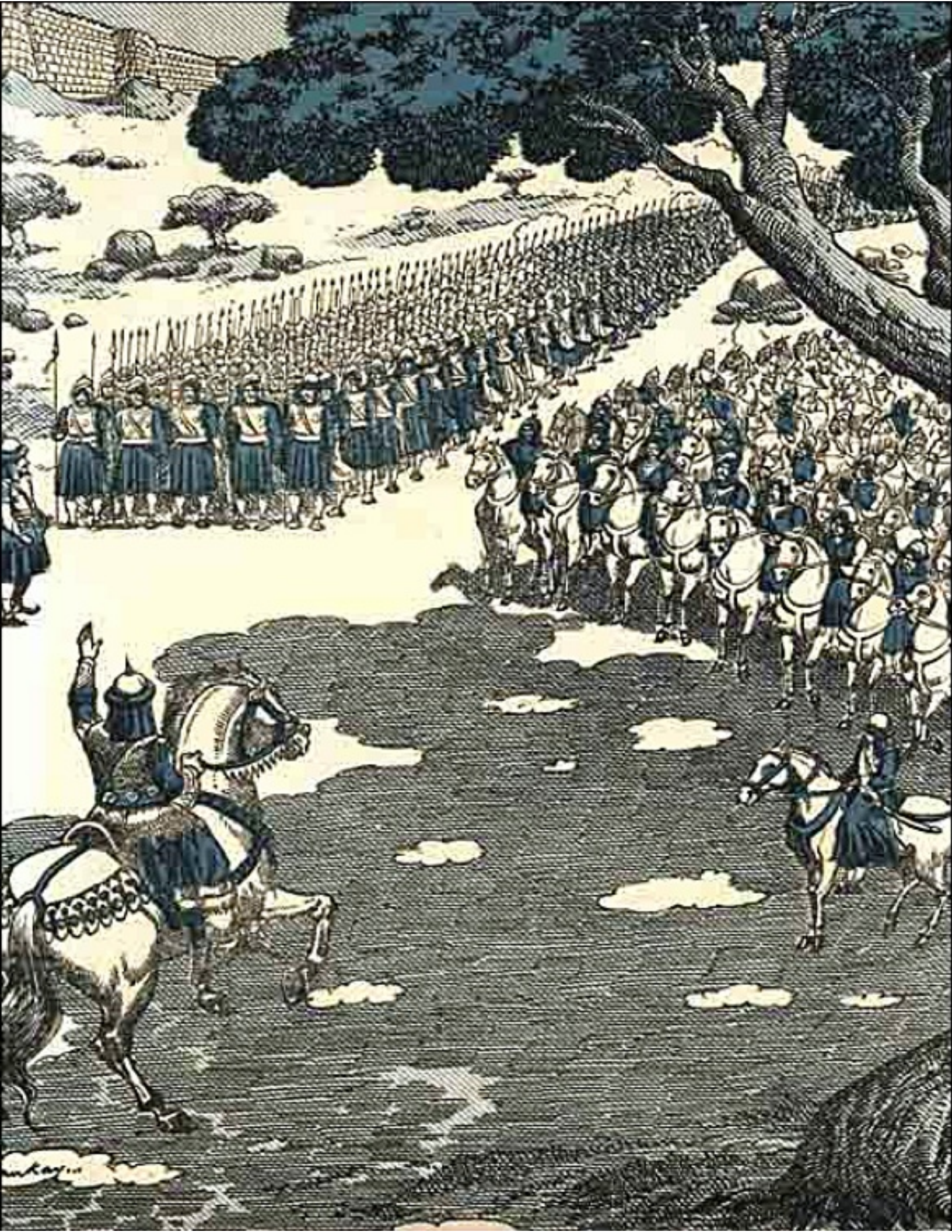
तो अपना सिंहासन आपको मुझे देना होगा। नहीं तो आजकल आपके पास जितनी सेना है, उसे मुझसे युद्ध करने के लिए कहें। आपके पास कितने सैनिक हैं?"

"चालीस हज़ार सैनिक और इनके अलावा चालीस हज़ार गुलाम हैं।" राजाने कहा।

"उन अस्सी हज़ार आदमियों को मुझसे युद्ध करने के लिए भेजिये। अगर उन्होंने मुझे मार दिया तो आपकी लड़की की कोई बदनामी न होगी। अगर मैं जीत गया तो लोग आपको मुझ जैसे दामाद के मिलने पर बधाई देंगे।" अम्मार ने कहा।

राजा दोनों बातें मान गया। राजा ने सोचा कि यह लड़का ज़रा पागल है, वह ज़रूर सैनिकों द्वारा मार दिया जायेगा। उसने हिंजड़े को बुलाकर कहा—"तुम जाकर मन्त्री से कहो कि मैदान में सारी सेना को उपस्थित करे।"

राजा की आज्ञा के अनुसार मन्त्री ने अस्सी हज़ार सैनिकों को मैदान में खड़ा कर दिया। युद्ध करने के लिए अम्मार को एक घोड़े की ज़रूरत थी। इसलिए

राजा ने एक नौकर को बुलाकर कहा—"अपनी अश्वशाला में एक अच्छे घोड़े को देखकर, उसे युद्ध के लिए तैयार करके ले आओ।"

यह सुन अम्मार ने कहा—"महाराज! वह घोड़ा यहीं है, जो मुझे यहाँ लाया था। मुझे और किसी घोड़े की ज़रूरत नहीं है।" उसने कहा।

"अच्छा, जैसी तेरी मर्जी।" राजा यह कहकर उसको अपने साथ मैदान में ले गया। वहाँ सन्नद्ध हो सैनिक पंक्ति में खड़े थे। उनसे राजा ने इस प्रकार कहा—

"सैनिक! यह युवक मेरी लड़की से विवाह करने आया है। यह कह रहा है कि वह बहुत बहादुर है और तुम सबको अकेला ही जीत सकता है। अगर यह सच हो तो गर्व की बात है, अगर न हो तो यह केवल दुस्साहस ही है। इसलिए यह जब तुम पर हमला करे तो तुम बिना किसी दया-दाक्षिण्य के इससे युद्ध करना।" सावधान रहना।

राजा ने अम्मार की ओर मुड़कर कहा " अब तुम युद्ध शुरु कर सकते हो।"

"यह अन्याय है। मैं खड़ा खड़ा कितनों से युद्ध कर सकता हूँ।" अम्मार ने पूछा।

"मैं जब घोड़ा दे रहा था तो तुमने क्यों मना किया? अब भी कोई बात नहीं! क्या घोड़ा तैयार करने के लिए कहते हो?" राजा ने पूछा।

"मेरा अपना घोड़ा है। मुझे किसी और घोड़े की जरूरत नहीं है।" अम्मार ने कहा।

"तो वह घोड़ा कहाँ है?" राजा ने पूछा।

"वह आपके महल की छत पर है।" अम्मार ने कहा।

"छत पर!" राजा ने आश्चर्य से पूछा। उसे फिर सन्देह हुआ कि उस लड़के का दिमाग जरा फिरा हुआ था। "घोड़ा छत पर कैसे होगा? आओ, फिर भी देखें।" कहकर उसने अपने सेना नायक से कहा-" जाकर देखो कि राजमहल की छत पर क्या है, अगर कुछ दीख पड़े तो साथ ले आना। ये कहते हैं कि इनका घोड़ा है।"

वहाँ एकत्रित लोग आपस में कहने लगे—"क्या घोड़ा सीढ़ी चढ़कर छत पर जा सकता है? क्या आश्चर्य की बात है?" वे कानाफूसी करने लगे। (अभी है)

काकोलूकीय

जमा हुए वन के सब पक्षी
जुड़ी सभा उनकी इकबार
'राजा किसको चुनें'—इसीपर
करने वे सब लगे विचार।

कहा एक ने "यद्यपि राजा
गरुड़ हमारे हैं बलवान,
किंतु विष्णु के सेवक हैं वे
नहीं हमारा रखते ध्यान।

विष्णुदेव की सेवा से ही
नहीं उन्हें मिलता अवकाश,
व्यर्थ कहाँ तक करें यहाँ हम
किसी तरह की उनसे आस!

जो न प्रजा की सुख-सुविधा का
रखे जरा भी दिल में ख्याल,
उसको राजा मान भला क्यों
करें हाल अपना बेहाल!"

यह सुन बोले एक साथ सब—
"हाँ, हाँ, यही हमारी राय!
राजा कोई चुन ही लें अब
नहीं शेष है और उपाय।"

फिर तो सब यह लगे देखने—
योग्य भला इस पद के कौन?
गयी नज़र सहसा उल्लू पर
जो था बैठा बिलकुल मौन।

शकल अनोखी उसकी लखकर
यही किया तय सबने शीघ्र,
उल्लू को ही सिंहासन पर
बैठा दें हम सब अब शीघ्र।

सिंहासन तब गया सजाया
राज-सभा लग गयी तुरन्त,
मंगलमय वाद्यों के स्वर से
लगा गूँजने दिग-दिगन्त।

मधुर तान छेड़ी कोयल ने
नाच उठे जितने थे मोर,
बने तबलची सभी कबूतर
दीवाने हो उठे चकोर।

श्री "भारतीभक्त"
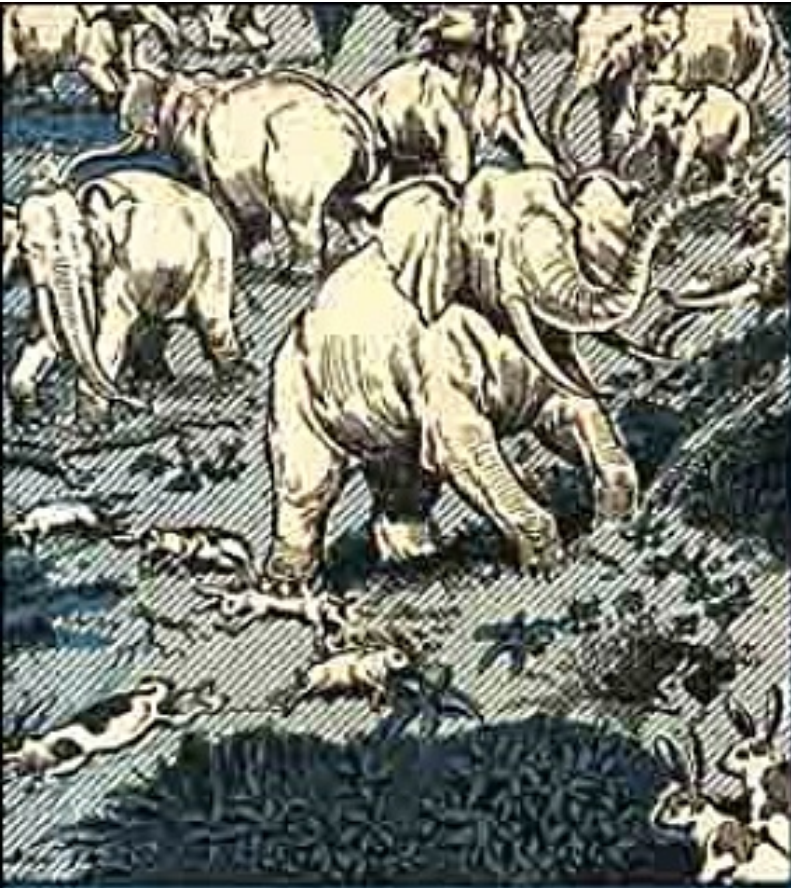
द्वारपाल बन आया बगुला
सारस-बाज सिपहसालार,
श्वेत हंस मंत्री भी आये
आये बड़े-बड़े सरदार।

तोता राजपुरोहित था जो
करता शुभ मंत्रों का गान,
अपनी अपनी जगह खड़े थे
करने सब नृप का सम्मान।

राजसिंहासन पर उल्लू जब
हुआ बैठने को तैयार,
कौआ एक कहीं से आया
बोला—"यह कैसा व्यापार?"

कौए को लख सारे पक्षी
लगे परस्पर करने बात,—
"चतुर पक्षियों में यह होता
सुनो, सुनो, इसकी भी बात!"

कौए ने जब फिर से पूछा—
"कहो कौन-सा उत्सव आज?"
उत्तर मिला—"नये राजा के
राजतिलक का यह सब साज।

उल्लू राजा हो—हम सब ने
यही अभी ही दी है राय,
अब जब तुम भी आये हो तो
कहो तुम्हारा क्या अभिप्राय?"

कौआ हँसकर बोला—"भाई,
बहुत बहुत मैं हूँ हैरान,
मोर हंस-से पक्षी को तज
देते क्यों उल्लू को मान?

दिन में अंधा, शकल भयंकर
टेढ़ी हरदम रहती नाक,
क्रोध भरा नस नस में इसकी
है बिल्कुल ही यह नापाक।

गरुड़ हमारे राजा ऐसे
जिनका ले केवल हम नाम,
कर सकते हैं दुश्मन का भी
बात बात में काम तमाम!

कहता हूँ मैं कथा, कभी था
चतुर्दन्त नामक गजराज,
वह था इतना बली कि उससे
डरते रहते थे वनराज।

एक समय दुर्भिक्ष पड़ा जब
सूख चले निर्झर औ' झील,
चतुर्दन्त अपने दल को ले
चला बीसियों ही जब मील।

तब सहसा ही वन में उनको
मिला सरोवर सुन्दर एक,
जिसमें जाकर प्यास बुझायी
क्रीड़ा करता रहा अनेक।

दिन ढलने पर चतुर्दन्त वह
निकला अपने दल के संग,
तट पर थे खरगोश अनेकों
कुचल गये जिनके सब अंग।

मर-खपकर जो बचे वहाँ, वे
उठे शोक से कर चीत्कार,
हाय हाथियों के इस दल ने
कर डाला बिलकुल संहार।

चले गये जब हाथी सब तो
जमा हुए बाकी खरगोश,
मारे भय के वे व्याकुल थे
और उड़े जाते थे होश।
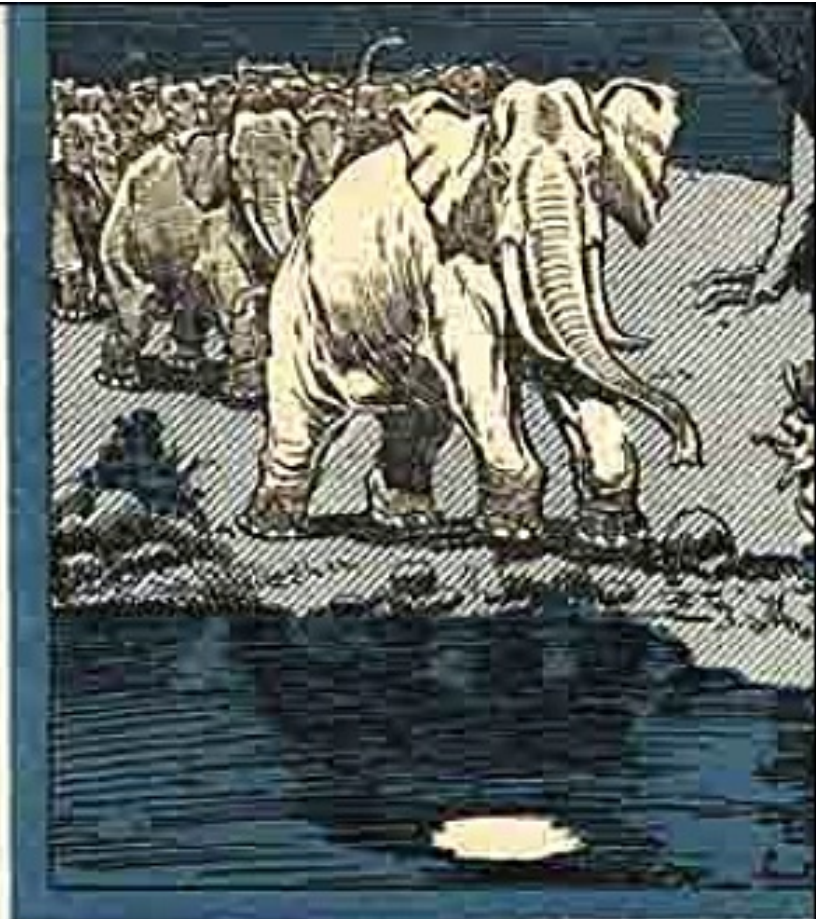
खूब सोचकर उन खरहों ने
किया यही निश्चय तत्काल,
हाथी फिर से आ न सकें ये
ऐसी ही चलनी है चाल।

पुनः दूसरे दिन सब हाथी
चले सरोवर की जब ओर,
'लम्बकर्ण' खरहा जा बैठा
एक शिला पर देह सिकोड़।

चतुर्दन्त को निकट देखकर
बोला झट वह बहुत सरोष—
"अरे मूर्ख हाथी, क्या तुझको
नहीं रहा कुछ भी है होश?

विचित्र बातें

१. अंग्रेजी कलेन्डर में आप सब जानते ही हैं अक्टोबर, नवम्बर, दिसम्बर, आदि नाम के महीने हैं। आपने इन नामों में एक विचित्र बात देखी ? इन नामों में सप्त, अष्ट, नव, दश आदि शब्द हैं। इनके आधार पर हम अनुमान कर सकते हैं कि सितम्बर, सातवाँ महीना है, अक्टोबर आठवाँ, नवम्बर नवाँ और दिसम्बर दसवाँ है। परन्तु वर्तमान अंग्रेजी कलेन्डर में ये नवाँ, दसवाँ, ग्यारहवाँ और बारहवाँ महीने हैं। यह हेरफेर कैसे हो गया ? कभी आपने सोचा इसका क्या कारण है ?

उत्तर :—

जूलियस सीज़र के पहिले रोमवासी वर्ष का प्रारम्भ मार्च से किया करते थे। तब उनका नव वर्ष हमारे नव वर्ष के समीप था। दोनों लगभग एक ही समय आते थे। परन्तु इसके बाद जनवरी से उनका साल शुरू होने लगा। इसलिए इन मासों के नाम और उनकी संख्या में भेद हो गया।

२. तीन अंकोंवाली कोई संख्या लीजिये। इनके साथ तीन और अंक लिखकर उसको छे कीजिये। फिर इन अंकों को सात से भाग दीजिये। कुछ न बचेगा। जो भाग देने पर आयेगा उसे ग्यारह से भाग दीजिये, तब भी कुछ न बचेगा। दूसरी बार जो निकलेगा उसे तेरह से भाग दीजिये। फिर कुछ न बचेगा। तीसरे बार भाग देने पर जो संख्या निकलेगी, वह वही पहिलेवाली तीन अंकों की संख्या होगी। क्या कारण है ?

उत्तर :—

इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं। मान लीजिये कि हम ३६५ संख्या लेते हैं। उसको ३६५, ३६५ करने का मतलब यही न हुआ कि उसको १००१ से गुणा करें। १००१ में ७,११,१३, समा जाते हैं। ७ × ११ = ७७; ७७ × १३ = १००१।

[१३]

[जब रूपधर का पता-ठिकाना कुछ न मालूम हुआ तो उसको मृत जान कई राजकुमारों ने उसके घर आकर धरना दिया और वे रूपधर की पत्नी को उनमें से एक से विवाह करने के लिए बाधित करने लगे। रूपधर का छोटा लड़का धीरमति अपने पिता के बारे में जानने के लिए नौका में नयघोत और प्रताप से मिलने गया।]

इस बीच, इथाका में रूपधर के घर इकट्ठे हुए युवक निश्चिन्त हो खा रहे थे, पी रहे थे, जुये में समय व्यतीत कर रहे थे। वे नहीं जानते थे कि धीरमति पैलास गया हुआ था। घर के बाहर जब वे जुआ खेल रहे थे तो एक नवयुवक ने आकर दुर्बुद्धि से पूछा—"क्या आप जानते हैं कि कब धीरमति पैलास से वापिस आ रहा है? वह मेरी नाव ले गया है और अब मुझे अपनी नाव की जरूरत है। मैं समुद्र पार जाकर एक जंगली घोड़ा लाना चाहता हूँ।" सब आश्चर्य में एक दूसरे का मुँह ताकने लगे।

दुर्बुद्धि ने उस युवक से पूछा—"धीरमति क्या पैलास गया है? क्या उसने तेरी नाव ली है? क्या उसे वह तुझसे पूछकर ही ले गया था? यह सब कब की बात है? उस नाव के नाविक

[एक ग्रीक पुराण कथा]

कहा—"हम यह नहीं सह सकते। हमारी आँखों में धूल झोंक कर, नाव लेकर, नाविकों को जमा करके चला गया। इस छोकरे की इतनी हिम्मत! एक ऐसी नाव लाओ जो बाण की तरह चले। बीस नाविकों को इकट्ठा करो। मैं धीरमति की खबर लेकर रहूँगा।"

तब उन्होंने मिलकर आपस में सलाह मशवरा किया। दुर्बुद्धि ने छुप छुपाकर, धीरमति को वापिसी रास्ते पर मारने का निश्चय किया।

उनके षड़यन्त्र के बारे में पद्ममुखी को नौकरों द्वारा मालूम हुआ। वे दुष्ट उसके लड़के को मारने का प्रयत्न कर रहे थे, यह जानने से पहिले वह न जानती थी कि धीरमति कहाँ गया हुआ था।

"इतने नौकर-चाकर हैं पर किसी ने भी न बताया कि मेरा लड़का समुद्र यात्रा पर गया हुआ है। अगर मुझे मालूम होता तो मैं उसे जाने न देती।" पद्ममुखी रोने लगी।

"दुल्हिन, लगता है, शादी के लिए रो रही है। शायद यह नहीं जानती कि उसका लड़का चला जायेगा।" एक दुष्ट ने कहा।

कौन हैं! क्या वे धीरमति के ही नौकर हैं! या शहर के युवक हैं! धीरमति किस काम पर पैलास गया है!" उसपर उन्होंने प्रश्नों की बौछार की।

"मेरी इच्छा पर ही वह नाव ले गया है। जब इतना बड़ा आदमी आकर पूछे तो मैं न कैसे कर सकता हूँ! शहर के लड़के ही नाविक होकर गये हैं। सहन उन लोगों का सरदार बनकर गया है।" उस युवक ने दुर्बुद्धि को जवाब दिया।

दुर्बुद्धि की आँखें आग बरसाने लगीं। उसने अपने साथियों की ओर मुड़कर

"देखो, कोई भी लापरवाही से बातें न करे। धीरमति की हत्या के बारे में दीवार को भी न मालूम हो।" यह कहकर दुर्बुद्धि, हट्टे-कट्टे बीस साथियों को चुनकर समुद्र के किनारे गया। एक नाव में भाले, तलवार रखकर, चप्पू ठीक कर, उसे वे तट से कुछ दूर ले गये। वहाँ उन्होंने लंगर डाला। फिर वापिस आकर उन्होंने समुद्र के किनारे भोजन किया। भोजन करके वे रात्री की प्रतीक्षा करने लगे।

उस दिन पद्ममुखी ने भोजन न किया। उसे ठीक तरह नींद भी न आई। वह सोचने लगी कि वह अपने लड़के को देखेगी या उसके शव को। ठीक उसी समय अन्धेरे में उसे अपनी बहिन का आकार दिखाई दिया—"बहिन! क्यों दुःखी होती हो! तेरे लड़के पर कोई खतरा नहीं आयेगा।" उसने कहा और देखते-देखते वह अदृश्य हो गई।

उसी दिन रात को वे दुष्ट नाव को एक पथरीले द्वीप के पास ले गये। वहाँ लंगर डालकर वे धीरमति की प्रतीक्षा करने लगे।

और इधर धीरमति प्रताप से विदा लेकर निकल पड़ा। समुद्र तट पर जाकर नाविकों से मिलकर, देवताओं को बलि देकर, उसने घर की ओर नौका में प्रस्थान किया। परन्तु वह अपनी नौका सीधे नगर न ले जाकर एक और बन्दरगाह में ले गया। वहाँ वह स्वयं उतर गया। उसने अपने साथियों से कहा—"तुम नगर चले जाओ। मैं एक बार अपने सूअरों के रखवाले से मिलकर नगर वापिस आऊँगा।"

धीरमति जब सूअरों के रखवाले के झोंपड़े के पास गया तो उस समय रूपधर

सूअरों का रखवाला विस्मित हो उठा— अपने मालिक के पास जाकर उसे इस तरह आलिंगन किया जैसे किसी दूर देश से उसका लड़का वापिस आया हो। उसने कहा— "आ गये बेटा! मैंने न सोचा था कि कभी मैं तुझे इन आँखों से देख पाऊँगा। अन्दर आओ। सुना है कि पैलास गये थे?" उसकी आँखों से आनन्द के आँसू बहने लगे।

"चाचा! वहीं से आ रहा हूँ। हमारे घर के बारे में क्या खबर है? क्या माँ ने शादी कर ली है?" धीरमति ने पूछा।

"बाबू! ऐसी तो कोई बात नहीं हुई। परन्तु रात-दिन वे दुख के कारण सूखती जाती हैं।" धीरमति के हाथ से भाला लेते हुए सूअरों के रखवाले ने कहा।

धीरमति को अन्दर आता देख रूपधर ने उठकर उसे स्थान देना चाहा। पर धीरमति ने कहा—"चाचा, उठो मत! बैठने के लिए एक और आसन मिल जायेगा।"

रूपधर फिर बैठ गया। सूअरों के रखवाले ने धीरमति के लिए एक और खाल बिछाई। फिर तीनों ने मिलकर

और वह झोंपड़े में ही खाना पका रहे थे। झोंपड़े के बाहर कुत्तों ने उसे पहिचान लिया और वे दुम हिलाने लगे।

"कोई आया है—या तो कोई तेरी जान पहिचान का है, नहीं तो कोई मेरा मित्र है। क्योंकि कुत्तों का भोंकना तो अलग वे उसका प्रेम से स्वागत करते मालूम होते हैं।" रूपधर ने सूअरों के रखवाले से कहा।

रूपधर ने कहना खतम ही किया था कि धीरमति झोंपड़े के द्वार के पास आकर खड़ा हो गया। उसे देखते ही

भोजन किया। भोजन के बाद धीरमति ने सूअरों के रखवाले से पूछा—"चाचा! ये नये आदमी कौन हैं!"

"बाबू, ये कहते हैं कि ये क्रीट देश के हैं। सारा संसार घूमे हैं। इनके भाग्य में देश विदेश घूमना ही लिखा है। वे किसी आपत्ति से बचकर मेरे झोपड़े में आश्रय के लिए आये हैं। मैं इन्हें तुम्हें सौंपता हूँ, जो तुम चाहो सो करो।" सूअरों के रखवाले ने कहा।

"यह तो अच्छी परीक्षा है चाचा! मैं इस अतिथि को अपने घर कैसे ले जाऊँ! मैं छोटा हूँ और मेरे घर में शत्रु भरे पड़े हैं। वे सब मेरी माता से विवाह करना चाहते हैं और माँ कुछ निर्णय नहीं कर पा रही है। इस हालत में मैं केवल इनकी इतनी सहायता कर सकता हूँ कि मैं पहिनने के लिए कपड़े, चप्पल और तेज़ तलवार दूँ। वे जहाँ चाहें वहाँ जा सकते हैं। नहीं तो तुम ही इन्हें अपने झोंपड़े में रखकर उनकी देखभाल करो। उनके भरण-पोषण का भार मुझपर ही होगा। कपड़े-भोजन आदि, सब मैं दूँगा। लेकिन इनका उन दुष्टों के बीच आना मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है। वे इनको बहुत तंग करेंगे और मैं वह सब न देख पाऊँगा!" धीरमति ने कहा।

फिर उसने सूअरों के रखवाले को पास बुलाकर कहा—"चाचा! तुम तुरन्त हमारे घर जाओ। माँ को अलग बुलाकर कहो कि मैं पैलास से वापिस आ गया हूँ। तेरी झोंपड़ी में हूँ। मेरे बारे में कोई चिन्ता न करे।"

"बाबू, जब से आप गये हैं आपके नाना ने भी भोजन नहीं छुआ है। क्या उनको भी बता आऊँ कि आप वापिस
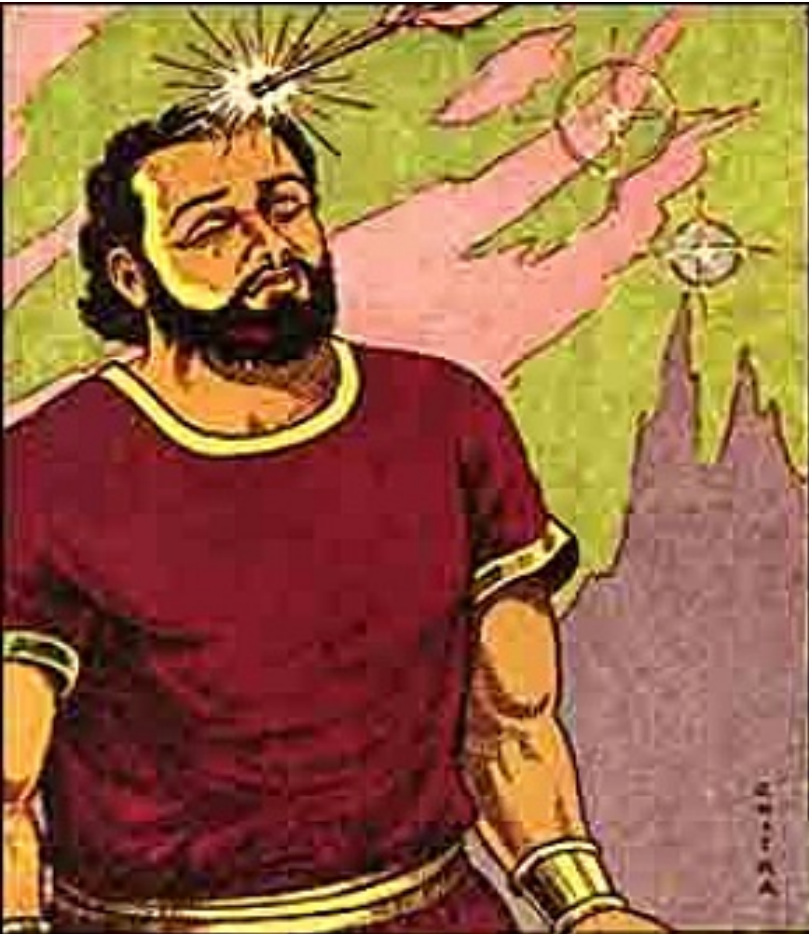
बाहर गया। देवी ने उससे कहा—"तुम अपने लड़के को बताओ कि तुम कौन हो! उसकी सहायता से अपने शत्रुओं का नाश करने का प्रयत्न करो। मैं क्योंकि तुम दोनों की मदद कर रही हूँ इसलिए तुम डरो मत।" कहकर उसने रूपधर पर डंडा फेरा।

तुरन्त रूपधर की झुर्रियाँ उड़ गईं। वह फिर युवक हो गया। उसके कपड़े भी बदल गये। इस तरह परिवर्तित रूपधर को देखकर धीरमति चकित हो गया। "आप कौन हैं! आप अवश्य कोई देवता हैं! साधारण मनुष्य इस प्रकार अपना रूप नहीं बदल सकते हैं। यही नहीं, साधारण मनुष्यों में इतना तेज़ भी नहीं होता।"

रूपधर ने स्वयं अपने बारे में कहा।

"मैं तेरा पिता रूपधर हूँ। बेटा! बहुत-सी मुसीबतें झेलकर आखिर स्वदेश पहुँचा हूँ।" उसने अपने लड़के को अपनी सारी कहानी सुनाकर पूछा—"यह बताओ, हमारे घर कितने दुष्ट हैं! हम उनको मार डालेंगे।"

"सब मिलकर एक सौ आठ आदमी हैं। इनके अलावा छः नौकर हैं। इन

आ गये हैं! बूढ़े हैं बिचारे!" सूअरों के रखवाले ने कहा।

"तुम और कहीं मत जाना। माँ से कहना कि मौका देखकर किसी नौकर द्वारा वे मेरी खबर नाना को पहुँचा दें। परन्तु तुम तुरन्त वापिस चले आओ।" धीरमति ने कहा।

सूअरों का रखवाला चला गया। झोंपड़े में बाप बेटे दोनों ही रह गये।

यकायक झोंपड़े के बाहर, रूपधर को बुद्धिमती दिखाई दी। उसने उसको बाहर आने का संकेत किया। रूपधर अकेला

सबको हम दोनों कैसे मार सकते हैं!" धीरमति ने पूछा।

"पागल, तुम सोच रहे हो कि हम दोनों ही हैं। हमारे साथ बुद्धिमती की सहायता भी तो है। इसलिए सवेरा होने से पहिले तुम घर पहुँचो। मैं भिखारी का वेष धारण कर अपने सूअरों के रखवाले के साथ वहाँ आऊँगा। वे दुष्ट चाहे मेरा कितना ही अपमान करें, तुम सह लेना। किन्तु मुझ पर नज़र रखना। जब मैं इशारा करूँ तब तू दीवारों पर लटकी तलवार, कटारें लेकर उपरली मंजिल पर एक कोने में छुपा देना, अगर उनमें से कोई पूछे कि हथियार कहाँ हैं तो विनयपूर्वक कहना कि उनपर जंग चढ़ गई थी इसलिए उनको रख दिया है। परन्तु हम दोनों के लिए आवश्यक शस्त्र—दो भाले, दो तलवार, दो ढालें, ऐसी जगह रखना जहाँ हम आसानी से पहुँच सकें। तुम अधिक पी-पाकर किसी से झगड़ा न मोल लेना। समझे, नहीं तो हमारा काम बिगड़ जायेगा। यह किसी को न मालूम हो कि मैं वापिस आ गया हूँ। अपनी माँ से भी न कहना। अभी हम दोनों
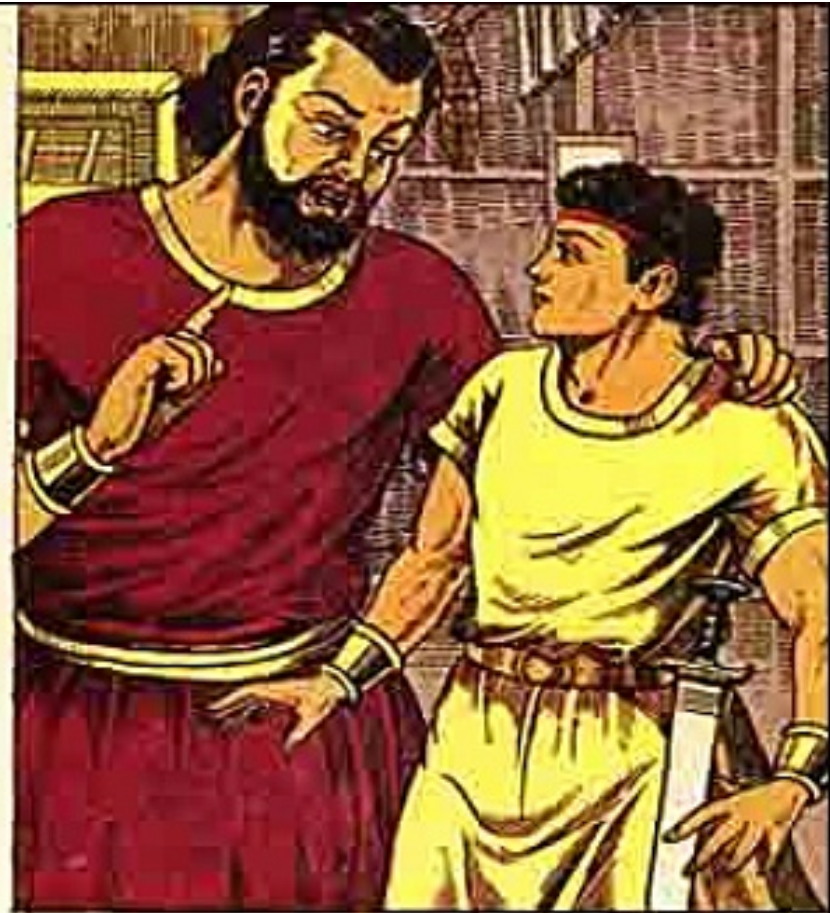
के सिवाय किसी को यह बात नहीं मालूम होनी चाहिए।" रूपधर ने अपने लड़के से कहा।

इस बीच, धीरमति जिस नौका में पैलास गया था वह नगर पहुँच गई। इस नौका के चलानेवालों में एक रूपधर के घर आया। वह और सूअरों का रखवाला एक साथ ही वहाँ पहुँचे। यह जानकर कि वह पद्ममुखी से धीरमति के वापिस आने की बात बताने आया था वहाँ धरना दिये हुये दुष्ट, जो धीरमति को रास्ते में मारने गये थे, वे भी चले आये।

उन सबने मिलकर एक गुप्त सभा की। तब दुर्बुद्धि ने यों कहा।

"इस बार यह जिन्दा निकल गया है। किन्तु यदि यह जल्दी न मारा गया तो हम पर आफ़त आयेगी। पहले ही जनता हमारा विरोध कर रही है। यह आकर सबसे कह देगा कि हमने उसे मारने की कोशिश की थी। तब लोग हमें देश से बाहर भगा देंगे। इसलिए धीरमति को शहर में प्रवेश करते समय हम मार देंगे और उसकी सम्पत्ति को आपस में बाँट लेंगे। जो हम में से पद्ममुखी से विवाह करेगा उसे रूपधर का घर मिलेगा। अगर हमने धीरमति को जीने दिया तो हम रूपधर के घर में न रह सकेंगे। हर किसी को अपने घर रहकर शादी के लिए प्रयत्न करना होगा। बताओ क्या किया जाये।"

कई ने धीरमति की हत्या पर आपत्ति उठाई। "हमें यह बिना जाने कि धीरमति के भाग्य में मरना बदा है कि नहीं, कुछ नहीं करना चाहिये। अगर देवता यह बतायें कि उसकी मृत्यु निश्चित है तो मैं ही उसकी मृत्यु स्वयं करूँगा। तबतक हमें जल्दबाज़ी नहीं करनी चाहिए।" उनमें से एक ने कहा। सबको यह सलाह जँची। वे घर वापिस चले गये।

उस दिन शाम को सूअरों का रखवाला जब अपनी झोंपड़ी वापिस पहुँचा तो बुद्धिमती देवी ने रूपधर का आकार इस तरह बदल दिया था कि वह पहिचान न पाया। रात को, भोजन के बाद धीरमति पिता के साथ सूअरों के रखवाले के झोंपड़े में ही सोया।

(अभी और है)

गौ का भाव - ताव

एक किसान के पास एक मारनेवाली गौ थी। थोड़े दिनों बाद उसने दूध देना बन्द कर दिया। इसलिए किसान उसे बेचने हाट ले गया।

कई ने आकर गौ के लिए भाव-ताव किया। पर किसान उनसे कहता जाता—"यह गौ? यह तो सूख गई है। बूँद भर दूध नहीं देती, फिर ऊपर से मारती है।" इसलिए उसे किसी ने न खरीदा।

यह देख एक पशुओं के व्यापारी ने कहा—"तुझे गौ बेचना बिल्कुल नहीं आता। मुझे दे, मैं एक मिनट में बेच दूँगा।"

"और मुझे क्या चाहिये?"—किसान ने गौ, व्यापारी को सौंप दी।

तुरत व्यापारी चिल्लाने लगा—"अच्छा मौका है। बड़ी सीधी गौ है। एक समय में तीन सेर दूध देती है। जो चाहते हैं जल्दी करें। फिर मौका न मिलेगा।"

"अरे, एक समय में तीन सेर दूध! ऐसी अच्छी गौ को मैं भला क्यों बेचूँगा!"—कहकर किसान ने व्यापारी से गौ ले ली, और जल्दी जल्दी घर चला गया।

भगवान की थाली

कृष्णा नदी के किनारे, एक गाँव में सौभाग्यवती नाम की एक बुढ़िया रहा करती थी। उसकी उम्र अस्सी वर्ष की थी। उसके दोनों लड़के छोटी उम्र में ही गुज़र गये थे। लड़कियाँ अपनी ससुराल जा चुकी थीं। उसने कई पोतियों को भी गोदी में उठाया था। पर उसका पोता एक ही था। उसका नाम था गोपीचन्द। वह कहा करती थी—"मैं इसे पाल पोस कर बड़ा करने के लिए ही जी रही हूँ।"

गोपीचन्द बड़ा होने पर खूबसूरत निकला। वह खूबसूरत ही नहीं, डील डौल भी था। वह अच्छे स्वभाव का था।

उसकी सारी सम्पत्ति केवल एक बैल गाड़ी थी। वह गाड़ी भाड़े पर चलाता, और जो कुछ पैसा मिलता, उससे अपना, अपनी बहिनों का और दादी का गुज़ारा करता। जब खेती का समय न होता तब भी उसकी गाड़ी को काम मिलता रहता। वह गाँव कुम्हारों के लिए प्रसिद्ध था। उनके बनाये हुये घड़े, सुराई, कसोरे आदि, शहर पहुँचाने के लिए गोपीचन्द की गाड़ी का उपयोग होता। गोपीचन्द के घर में दीवार के सहारे एक थैली लटकी रहती थी। उसकी दादी कहा करती कि वह भगवान की थाली थी। वह सब कष्टों का निवारण करती थी, उसे हाथ से छूना भी नहीं चाहिये; वह उसके ससुराल में आने से पहिले ही उस घर में चली आई थी। आदि।

गोपीचन्द अभी अट्ठारह वर्ष का ही था कि उसकी दादी को पक्षपात हो गया। उसने पोते को पास बुलाकर कहा—"बेटा, भगवान की थाली के बारे में

सावधान रहना। वचन दो कि उसके पास तक न जाओगे।" गोपीचन्द ने उसकी इच्छानुसार वचन दिया।

"जब तक भगवान की अनुमति न हो, उसे न बेचना, घर से बाहर न जाने देना।" गोपीचन्द जवाब भी न दे पाया था कि बुढ़िया इस संसार से चली गई।

रात भर गोपीचन्द अपनी दादी के शोक में रोता रहा। उसके सिवाय वह किसी और माता को न जानता था। सम्पन्न लोग ही मृत सम्बन्धियों के लिए बहुत दिनों तक रो धो सकते हैं, विचारे गरीबों के लिए यह कैसे सम्भव है? गोपीचन्द अगले दिन फिर गाड़ी लेकर निकला क्यों कि जिस दिन वह न कमाता उस दिन चारों को उपवास करना पड़ता। दादी के मर जाने के बाद उसके लिए यह विशाल संसार सिकुड़-सा गया। घर वापिस आता तो गाड़ी खोलकर एक कोने में लेट जाता और अपने कुत्ते को पुचकारता दादी के लिए रोता।

दादी के मर जाने के बाद घर का काम लड़कियों के हाथ में चला गया। उनको रोकने के लिए दादी तो थी नहीं, इसलिये वे घर के काम में लापरवाही दिखाने लगीं। आल्तु-फाल्तु गहने खरीद कर खुशियाँ मनाने लगीं।

"गोपीचन्द—तुम तो अब सयाने हो गये हो, किसी कामकाजी लड़की से शादी करके घर बसालो, तुम्हारी बहिनें छोटी हैं, वे घरबार न देख सकेंगी।" गोपीचन्द को अड़ोस-पड़ोस के लोगों ने सलाह दी।

"पहिले बहिनों की शादी होने दीजिये। अभी मेरी शादी के बारे में क्या जल्दी है।" गोपीचन्द कहा करता।

पर सच यह था कि गोपीचन्द ने अपने लिये लड़की पहिले ही चुन रखी थी। पर उसके साथ विवाह होना असम्भव-सा था। वह कुम्हारों के मुखिया शिवलाल की लड़की पार्वती थी।

शिवलाल के लिए गोपीचन्द प्रायः गाड़ी ले जाया करता। इसलिये उसकी पार्वती से अच्छी जान पहिचान हो गई थी। उन दोनों में बातचीत तो न होती थी पर जब कभी गोपीचन्द दिखाई देता तो पार्वती मुस्कराती, बातचीत करने की इच्छा भी दर्शाती। गोपीचन्द ही दूर दूर रहता, क्योंकि वह सोचा करता था कि वह गरीब था।

यकायक गोपीचन्द की हालत और भी बिगड़ गई। उसका एक बैल मर गया, दूसरे का पैर टूट गया, गोपीचन्द को ऐसा लगा जैसे उसकी दोनों टाँगें ही टूट गई हों। गाँववालों ने थोड़ी बहुत मदद तो जरूर की पर जो उसे अपने पैरों पर खड़ा कर सकते थे, वे देखते रहे। कुम्हारों के मुखिया शिवलाल ने भी सहायता न की। यह नौबत आई कि घर में चूल्हा भी न जलता।

एक दिन गोपीचन्द घर में बैठा था। उसे कुछ सूझ न रहा था कि क्या करे। तब एक व्यापारी ने आकर उससे कहा—"भाई, सुनता हूँ कि तुम्हारे घर में कोई पुरानी थाली है। क्या मैं उसे देख सकता हूँ।"

गोपीचन्द ने दीवार पर लटकी थैली को दिखाया। जब व्यापारी ने उस थैली को लेना चाहा तो गोपीचन्द ने कहा—"उसे मत छुओ।"

व्यापारी ने आश्चर्य से पूछा—"यह क्या कहा! मैं तो उसे पाँच रुपये देकर खरीदने के लिए आया हूँ।"

"वह बेचने के लिए नहीं है।" गोपीचन्द ने कहा।

"दीवार पर लटकाये रखने से क्या फ़ायदा! चलो, दस रुपये दूँगा। नुक्सान भी हो गया तो कोई बात नहीं।" व्यापारी ने कहा।

गोपीचन्द न माना। व्यापारी ने भी न छोड़ा। पचास रुपये तक देने के लिए कहा। गोपीचन्द को रोमान्च-सा हुआ। वह उस धन से एक और बैल खरीद सकता था और फिर गाड़ी चला सकता था। फिर भी दादी की बात याद करके

उस व्यापारी के चले जाने के बाद कई और व्यापारी उसे खरीदने के लिए आये। गोपीचन्द दूसरों की गाड़ी किराये पर लेकर चलाता, कभी कुछ मिलता तो कभी कुछ भी न मिलता। एक वक्त खाता तो दो वक्त खाली पेट पड़ा रहता। पर उसने थाली न बेची।

इस बीच उसे प्रायः पार्वती रोज़ दिखाई देती। गोपीचन्द का पालतू कुत्ता भी उससे हिल गया। जब कभी वह दिखाई देती तो वह दुम हिलाने लगता। पार्वती भी उसे प्रेम से देखती।

उसने थाली बेचने से इनकार कर दिया। गोपीचन्द के घर में रखी वह थाली काकतीय काल की थी। वह बढ़िया सोने की थी। जब काकतीयों की राजधानी वोरंगल को मुसलमानों ने घेर लिया, तब वह गोपीचन्द के पूर्वजों के हाथ आई। उसे उन्होंने काकतीयों की सम्पत्ति समझकर बड़े भक्तिभाव से सुरक्षित रखा।

यह बात उड़ती उड़ती शहर भी पहुँची। यह सुनकर ही एक व्यापारी गोपीचन्द से भावताव करने के लिए आया था। पर गोपीचन्द बेचने के लिए राजी न हुआ।

लोग गाँव में कहने लगे कि पार्वती के विवाह की बातचीत किसी बड़े घर में हो रही थी। यह सुनते ही गोपीचन्द का रहा सहा उत्साह भी जाता रहा। उसने अपने मन को समझाया—"जब मेरी पार्वती से शादी नहीं हो रही है तब चाहे किसी से भी हो, तो मुझे क्या!" क्योंकि गोपीचन्द की हालत ऐसी थी कि वह दिन रात मेहनत करता पर तब भी न खुद पेट भर खा पाता, न बहिनों को ही खिला पाता। और शिवलाल इतना सम्पन्न था कि उसकी पाँचों

अंगुलियाँ घी में थीं। यह भी सुना जाता था कि वह शहर के व्यापारियों को भी सूद पर रुपया दिया करता था।

उस साल फसल अच्छी रही। खेतों में सुनहरा धान लहलहा रहा था। परन्तु गोपी के घर में गरीबी धरना दिये हुये थी। दादी की मृत्यु के बाद घर में शनि का वास-सा हो गया था। उसकी एक बहिन बीमार पड़ गई। गोपीचन्द को घर का कामकाज भी देखना पड़ा। "इन कष्टों को भगवान की थाली ने क्यों नहीं हटाया!" गोपी सोचने लगा।

एक दिन शिवलाल ने गोपीचन्द को गाड़ी जोतकर लाने के लिए कहा। उस दिन उसे बहुत-से पात्र शहर पहुँचाने थे। उस काम के साथ एक और काम भी मिल गया। शिवलाल ने गोपीचन्द को रुपयों की एक थैली देते हुए कहा—"इस पैसे को फलाने व्यापारी को देकर रसीद ले आना। तुम पर मुझे भरोसा है, इसलिए तुम्हें यह काम सौंप रहा हूँ।"

यह जानकर कि शिवलाल को उस पर इतना भरोसा था गोपीचन्द को बड़ी खुशी हुई। वह गाड़ी में पात्र भरकर कुत्ते को लेकर शहर के लिए निकल पड़ा। पात्र देकर जब वह व्यापारी के पास पहुँचा तो दुपहर हो गई। गोपीचन्द ने गाड़ी खोल दी और कुत्ते को वहाँ रखवाली करने के लिए छोड़ वह व्यापारी के घर में गया। व्यापारी ने रुपया ले तो लिया पर रसीद देने में कुछ देरी हो गई।

गोपीचन्द ने बाहर आकर देखा तो न वहाँ कुत्ता था, न बैल न गाड़ी ही। "गली में कुत्तों को पकड़कर ले जाते हैं इस शहर में, तुम नहीं जानते?" गली में लोगों ने उससे पूछा।

गोपीचन्द पर बिजली गिर गई। "मेरी गाड़ी और बैल कहाँ हैं!" उसने पूछा।

"अभी अभी कोई पकड़कर ले गया है।" गली के लोगों ने बताया।

गोपीचन्द को गाड़ी और बैल खोने की अपेक्षा कुत्ते के जाने का अधिक दुःख रहा। यह जानकर कि उसे कहाँ ले गये थे, वह उसे लेने के लिए दौड़ा। वहाँ उसने लोगों से मिन्नतें करके कुत्ता छोड़ देने के लिए कहा।

"यह तेरा कुत्ता है! पाँच रुपये देकर छुड़वा ले जाओ। कुत्ते को छुड़ाने के लिए दो रुपये और चूँकि उसने पकड़नेवाले को काटा था इसलिए तीन रुपये जुरमाना।" वहाँ के आदमियों ने कहा।

गरमी की दुपहरी में सिर जल रहा था। गोपीचन्द ने सवेरे से पानी तक न पिया था। फिर भी वह अपने गाँव भागकर शिवलाल के पास गया। "बाबू, आप ही मुझे बचा सकते हैं।" वह उसके सामने रोया धोया।

शिवलाल ने यह सोचकर कि गोपीचन्द ने रुपयों की थैली फेंक दी होगी, उसे डाँटना डपटना शुरु किया पर जब

गोपीचन्द ने रसीद दिखाई तो उसका मन शान्त हुआ।

"बाबू! मेरे कुत्ते को पकड़ लिया है। पाँच रुपये दिलवाइये, शाम तक अगर मैंने रुपये न दिये तो विचारा कुत्ता भूखा मर जायेगा, आपका कर्ज किसी न किसी तरह चुका दूँगा।" गोपीचन्द के यह कहते कहते आँखों में आसूँ छलक आये।

"तेरे कुत्ते पर पाँच रुपये फेंकने के लिए मेरे पास नहीं है। अगर वह कुत्ता गया तो जाने दो, एक और पाल लेना।"

गोपीचन्द डगमगाता आया, उसका भगवान पर भरोसा जाता रहा। उसे यकायक भगवान की थाली पर ख्याल आया। दादी ने कहा था कि अगर भगवान की अनुमति हो तो उस थाली को बेचा जा सकता था। भगवान जरूर अनुमति देंगे। अगर ऐसे समय पर यह थाली काम में न आई तो यह किस काम की! उसे भगवान पर फिर विश्वास होने लगा।

उसका घर जाना, दीवार से थैली का उतारना, उसे लेकर फिर शहर में जाना वहाँ व्यापारी के पास जाकर कहना—

"यह लो भगवान की थाली, पचास रुपये दो" ये सब उसे सपने-से लग रहे थे। उसे बेहोशी-सी आ रही थी।

उसके हाथ से व्यापारी के थाली लेने पर वहाँ खड़े एक और सम्भ्रान्त व्यक्ति ने उसे लेकर कहा—"इसका दाम पचास रुपये ही! इसका दाम तो और भी अधिक होगा।"

"पचास रुपये काफ़ी हैं। दीजिये।"

उस आदमी ने पचास रुपये दे दिये। गोपीचन्द लड़खड़ा गया। पाँच रुपये देकर उसने कुत्ते को छुड़ा लिया। वह कुत्ते को दुलार पुचकार ही रहा था कि वह बेहोश हो गया।

जब फिर उसे होश आया तो वह अपने घर में था। थोड़ी देर बाद, वह सम्भ्रान्त व्यक्ति उसके पास थाली लेकर आया। उसेने गोपीचन्द से पूछा—"क्यों भाई! यह थाली तुमने किसी जरूरत को पूरी करने के लिए ही बेची है न?"

"जी हाँ", गोपीचन्द ने कहा।

"क्या तुम जानते हो इसका क्या दाम है?" उस भद्र पुरुष ने पूछा।

"मुझे कुछ नहीं मालम।" गोपीचन्द ने कहा।

"यह थाली इतिहास में प्रसिद्ध है। इसका दाम, कम से कम पन्द्रह सौ रुपये होगा। यह लो बाकी रुपये"—यह कह कर भद्र पुरुष ने रुपयों की थैली दी।

उस दिन से गोपीचन्द का भाग्य फिरा। वह उस गाँव में धनी हो गया।

उसने जमीन खरीद ली। घर भी बनवा लिया जब पार्वती ने अपने पिता से कहा कि वह सिवाय गोपीचन्द के किसी और से शादी नहीं करेगी तो उसने भी कोई आपत्ति न की। विवाह के अवसर पर दोनों का जलूस निकाला गया तो कुत्ता भी शान से उनके साथ चला।

प्रकृति के आश्चर्य

दक्षिण अमेरिका में अमेजान नाम की एक नदी है। अमेजान की एक सहायक नदी, अराग्वया है। यह बहुत तेज़ नदी है। एक दिन हम एक जहाज़ में जा रहे थे।

तब उसका बहाव इतना तेज़ था कि किनारे के पेड़ों को भी उखाड़कर वह ले जा रही थी।

जहाज़ के ऊपर के भाग से देखते हुये एक व्यक्ति यकायक चिल्लाया—"जाग्वार, जाग्वार।"

"जाग्वार" एक प्रकार का शेर है। दक्षिण अमेरीका के जंगल में उससे बड़ा और उससे अधिक क्रूर जन्तु कदाचित् कोई नहीं है।

उसका चिल्लाना सुन जहाज़ के निचले भाग के लोग भी ऊपर चले आये। पानी के बहाव में एक छोटा द्वीप बहता दिखाई दिया। उस पर कुछ पौधे और एक जाग्वार शेर था। जंगल में जाग्वार बड़ी शान से चलते हैं। उनको देखकर डर लगता है। परन्तु यह शेर वैसा न था। काले धब्बोंवाला उसका पीला शरीर खूब भीग गया था, इसलिए वह पानी से बाहर आई हुई बिल्ली की तरह था। वह अपनी जान बचाने के लिए पौधों को पकड़े हुये था, प्रवाह के विरुद्ध जाते हुए जहाज़ के मनुष्यों की ओर इस तरह कातर दृष्टि से देख रहा था ताकि वे उसकी तुरन्त रक्षा करें।

पर उसकी कौन रक्षा कर सकता था ? वह छोटा-सा द्वीप बहता बहता हज़ारों टुकड़ों में बँट जायेगा। जाग्वार किनारे तक तैर सका तो ठीक है वरना वह नदी का शिकार होकर रहेगा।

तिबोर सेकल्य

जान्वार आँखों से ओझल हो गया। यात्री अभी जहाज़ में नीचे न गये थे कि जहाज़ किसी चीज़ से टकराया और खूब हिला। ऊपर के यात्री झूम-से गये। कुछ गिर गये और जहाज़ रुक गया।

जहाज़ का निचला भाग किसी चीज़ से रगड़ खा रहा था—गुर गुर आवाज़ हो रही थी। यात्री हाहाकार करने लगे। भय से इधर उधर भागने लगे। एक दूसरे को धका देने लगे। कुछ नीचे उतरने लगे तो कुछ नीचे से ऊपर भागने लगे।

इतने में कोई चिल्लाया—"हम डूब रहे हैं।"

देखते देखते पानी जहाज़ के उपरले भाग को छूने लगा। यात्रियों की धकम पेल और अधिक हो गई। स्त्री और बच्चे रोने लगे। इस भयंकर दृश्य में जहाज़ का कप्तान मेगाफ़ोन में ज़ोर से चिल्ला रहा था—"यात्रियो! डरो मत। कोई ख़तरा नहीं है। हमारे पास एक छोटी नाव है। उसमें सबको सुरक्षित किनारे पर भेज देंगे। तुम व्यर्थ न चिल्लाओ। सब अपने अपने स्थान पर रहें।"

कप्तान की, या तो इस बात के कारण या लोगों का, नाव का नीचे उतारे जाने को देखने के कारण, शोर शराबा कुछ कम हुआ। पहिले पहल चार मातायें और उनके बच्चे किनारे पर पहुँचाये गये। उनके बाद और स्त्रियाँ भेजी गईं। फिर पुरुषों की बारी आई। उस जहाज़ में तीस आदमी थे। इन सब को किनारे पर पहुँचाने के लिए एक घंटा लगा। सब के किनारे पर चले जाने के बाद जहाज़ का कप्तान व अन्य कर्मचारी भी किनारे पर आये।

सब नदी किनारे खड़े थे। हमारे चारों ओर जंगल था। पेड़ों से जड़ें लटक रही थीं। हमारे सामने जहाज का अगला भाग पानी से ऊपर उठ आया था। पानी की तह में पड़े किसी पेड़ के तने से टकराने के कारण जहाज़ में छेद हो गया था। पर वह तना ही उसे पूरा डूबने से तब रोक रहा था।

यात्रियों की हालत दयनीय थी। हमारा सारा समान जहाज में ही रह गया था। हम घने भयँकर जँगल में फँस गये थे। खाने को कुछ न था। हमें ढाढ़स बँधाने के लिए कप्तान ने कहा—"जहाज में से कुछ समान लाने के लिए कल प्रयत्न करेंगे। अगर हो सका तो जहाज को ही ऊपर निकालकर उसके छेदों की मरम्मत कर देंगे। थोड़े दिनों में हम फिर अपनी यात्रा शुरू कर सकेंगे।" इन बातों पर यात्रियों को पूरा विश्वास तो नहीं हुआ पर उनकी चिन्ता जरूर कुछ कम हो गई। सान्त्वना भी मिली।

हमने अपनी खुखरियों से छोटे छोटे पेड़ों को काटकर थोड़ी-सी जगह साफ़ कर ली। उसके बीच आग जला दी।

उसके चारों ओर लकड़ रखकर उनपर बैठ गये। कई ने अपने भीगे शरीर को और कपड़ों को आग में सुखाया।

तबतक शाम हो गई। उस रात को हमारे पास खाना न था। और जब यह बात लोगों को मालूम हुई तो कई को बड़ी ज़ोर से भूख लगने लगी।

जंगल से तरह तरह के चीत्कार, गर्जन सुनाई पड़ने लगे। वहाँ कई तरह के जानवर रहते होंगे। इस चीत्कार में एक पक्षी की आवाज़ इतनी तेज़ थी कि ऐसा लगता था, जैसे वह ऐन कान में ही चिल्ला रहा हो। वह यात्रियों के आसपास ही मँड़राने लगा।

"मैं यह आवाज़ अच्छी तरह पहिचानता हूँ। यह जंगली मुर्गा है।" एक यात्री ने कहा।

इतने में वह यात्रियों के पासवाले पेड़ की एक टहनी पर बैठ गया। उसके भार के कारण टहनी झुक गई। उसके पंख गेहुये रंग के थे। उनके बीच बीच में सफ़ेद लकीरें थीं।

"किसी के पास बन्दूक हो तो उसे मारकर आज हम खा सकते हैं।" एक वृद्ध ने कहा। पर किसी के पास बन्दूक न थी। इसलिए सब मुँह लटकाये बैठे थे।

यकायक वुस-सी कोई आवाज़ सुनाई दी। टहनी पर बैठी जंगल मुर्गी तड़पती तड़पती आग में गिर गई। इस आकस्मिक घटना पर सब को आश्चर्य हो रहा था कि क्या हुआ था।

इतने में हमें किसी की हँसी सुनाई दी। हमने चौंककर उस तरफ़ देखा, जिस तरफ़ से हँसी की ध्वनि आ रही थी। हमें एक पेड़ से उतरता एक इन्डियन जाति का लड़का दिखाई दिया। उसके हाथ में धनुष-बाण था। (अभी और है)

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

अक्तूबर १९५८ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें ।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिये । परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों । परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ७, अगस्त '५८ के अन्दर भेजनी चाहिये ।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

अगस्त – प्रतियोगिता – फल

अगस्त के फ़ोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषिक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा ।

पहिला फ़ोटो : **कहाँ जा रहे हो ?**

दूसरा फ़ोटो : **कहीं नहीं !**

प्रेषक : **श्री रमेश कन्धारी**

C/o श्री हरिलाल कन्धारी, १६ / ७३६ गेट अब्दुल रजाक फैज रोड, करोल बाग, नई दिल्ली - ५

चित्र - कथा

एक दिन दास और वास पार्क में खेल रहे थे। उस समय उनकी पुस्तकों के पास रखा बिस्कुट का पेकेट एक बड़ा कुत्ता उठा कर ले गया। जब दास और वास ने कुत्ते के मालिक से पूछ-तलब की तो उसने कहा—"चाहो तो तुम अपने कुत्ते को मेरे कुत्ते से लड़ाकर अपना पेकेट ले लो। इस बीच "टाइगर" ने उस बड़े कुत्ते की पूछ पकड़ ली। जब वह पेकेट छोड़कर "टाइगर" के पीछे भागा तो वह एक लकड़ी के तख्त पर चढ़ गया। उसका दूसरा सिरा जब बड़े कुत्ते के सिर पर गिरा तो वह रोता-चिल्लाता वहीं बैठ गया।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by him for Chandamama Publications, from Madras 26.—Controlling Editor: SRI 'CHAKRAPANI'
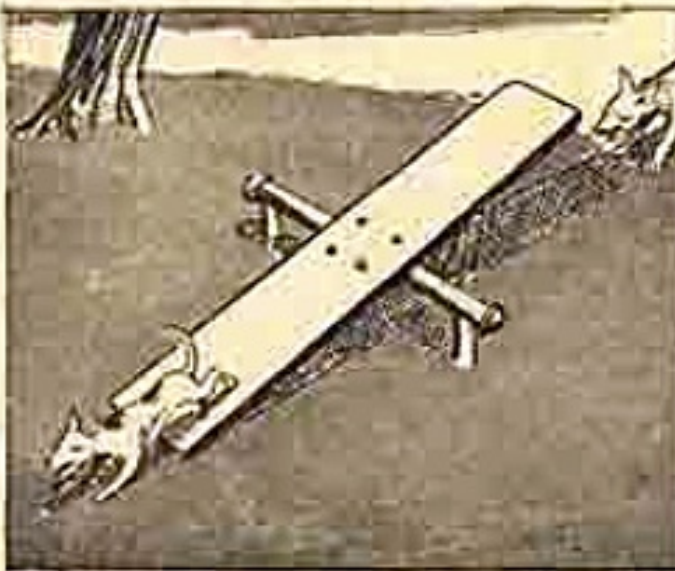
एजेन्टों और ग्राहकों से निवेदन है कि मनीआर्डर कूपनों पर पैसे भेजने का उद्देश्य तथा आवश्यक अंकों की संख्या और भाषा संबंधी आदेश अवश्य दें। पता – डाकखाना, ज़िला, आदि साफ़ साफ़ लिखें। ऐसा करने से आप की प्रतियाँ मार्ग में खोने से बचेंगी।

—सर्क्युलेशन मैनेजर

★

ग्राहकों को एक ज़रूरी सूचना!

ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिये। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न होगा, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकेगा। पता बदल जाने पर तुरन्त नए पते की सूचना देनी चाहिए। यदि प्रति न मिले तो १० वीं तारीख से पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद में आनेवाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

व्यवस्थापक, "चन्दामामा"

Photo by Sundaramurty

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

"कहीं नहीं!"

प्रेषक :
श्री रमेश कंधारी, नयी दिल्ली

रूपधर की यात्राएँ